टेक इट Easy

✭ जिंदगी जीने का आसान तरीका ✭

राजयोगी निकुंज

प्रस्तावना

❖❖❖

प्रिय पाठक,

कहते हैं की 'ज्ञान जितना बांटो उतना बढ़ता है' अतः जिंदगी में जो भी सुना, समझा और अनुभव किया उसे दूसरों के संग बांटने से अत्यंत ख़ुशी और संतोष प्राप्त होता है | एक *'अध्यात्मवादी'* के रूप में पिछले २५ वर्षो के तपस्वी जीवन में मैंने कई सारे विशिष्ट अनुभव किये जिन्हें शब्दों का रूप देकर आप सभी पाठकों के समक्ष रखने जा रहा हूँ | अध्यात्मिक पथ पर चलते चलते मैंने लगातार खुद का विश्लेषण कर अपने आप को पुन: खोजने का प्रयास किया हैं | एक स्तंभ-लेखक के तौर पर मैंने सदैव यही कोशिश की है की मै अपने पाठको के समक्ष वही बातें पेश करूँ जिन्हें मैंने स्वयं अनुभव किया हैं | मेरे अनुभव की इस सुंदर यात्रा को सुखद बनाने के लिए मैं सर्व प्रथम *'परमपिता परमात्मा'* का आभार मानता हूँ और साथ साथ ब्रह्माकुमारिज़ संस्था की पूर्व मुख्य प्रशाशिका दादी प्रकाशमणि जी, दादी ह्रदयमोहिनी जी,दीदी नलिनी जी, दादा करुणा जी एवं वे सब ज्ञानी-गुणीजनो का भी शुक्रगुज़ार हूँ जिन्होंने मुझे अध्यात्मिक प्रज्ञा से नवाज़ा और इस लायक बनाया जो मैं आज अच्छा सोच व् लिख सकूँ, | अंतमे मैं विश्वभर के, उसमे भी खास भारत के विभिन्न अखबारों के संपादकों और उनके सहकारियों को धन्यवाद करता हूँ की जिन्होंने पिछले ६ साल में मेरे द्वारा लिखे गये ३००० से भी अधिक लेख अपने अपने प्रकाशनों द्वारा प्रकट करके आप सभी पाठकों के ज्ञान में वृद्धि की | मुझे आशा व् विश्वाश हैं की *'गूगल'* के इस सुप्रयास के द्वारा मैं आप सभी को कुछ नवीनतम ज्ञान व् अनुभवों से लाभान्वित कर सकूँगा | ओम शांति |

मानवता की सेवा में सदैव

राजयोगी निकुंज

(nikunjji@gmail.com)

" सुचना "
बिना प्रकाशक की लिखित अनुमति के इस पुस्तक
का कोई भी भाग, किसी भी प्रकार से इस्तमाल
नहीं किया जा सकता, न कॉपी कराई जा सकती है,
न रिकॉर्डिंग और न ही कंप्यूटर या किसी
अन्य माध्यम से स्टोर किया जा सकता है|

अनुक्रमाणिका

०१) मै कौन और मेरा क्या?
०२) अपने भीतर के मै के प्रति जागरूक बने
०३) सृष्टि के चैतन्य बिज से संपर्क बनाएं रखे
०४) स्वयं का सम्मान करें
०५) अपने आत्मा सम्मान को पुन:जागृत करें
०६) उद्देश्य की खोज में
०७) सच्चे नायक बने
०८) तीसरा नेत्र खोलें
०९) जीवन में ‘जूनून’ को पुन:जागृत करें
१०) तोल मोल कर बोलों
११) अच्छा श्रोता बनें
१२) बदलते समय के साथ मूल्यों का जतन करें
१३) बदलते मूड का नियोजन करें
१४) चिंता नहीं-चिंतन करें
१५) टेक इट इज़ी
१६) अनासक्त वृत्ति द्वारा तनावमुक्त जीवन जियें
१७) हँसते रहे -मुस्कुराते रहें
१८) इतना गुस्सा क्यों?
१९) सब रोगों की एक दवा ‘योग’
२०) परम शांति की अनुभूति
२१) भावनात्मक स्थिरता
२२) विश्व परिवर्तन का आधार ‘स्व परिवर्तन’
२३) पश्चाताप की पीड़ा से अधिक श्रेष्ठ है - स्व परिवर्तन की भावना
२४) अपने भाग्य के निर्माता हम खुद
२५) ख़ुशी जैसी खुराक नहीं
२६) सकारात्मक बनें
२७) जरा संभल के
२८) सब्र का फल मीठा
२९) यथार्थ जीवन परिवर्तन
३०) अपने डॉक्टर खुद बनें
३१) लेखक का परिचय

मै कौन?

और

मेरा क्या?

इस विराट सृष्टि रंगमंच पर जन्म से लेकर मृत्यु तक के हमारे सफ़र में हम मनुष्य केवल दो शब्दों के बिच ही संघर्ष करते रहते हैं ,वह दो शब्द हैं 'मै' और 'मेरा'। दिनभर में अनेकानेक भूमिका निभाते हुए हम कई सारे परिवेष बदलते रहते हैं, इसी आश में की हम हर भूमिका को निभाते हुए अपना श्रेष्ठ प्रदर्शन उसमे कर सके। पर क्या हमने यह जानने की कभी चेष्ठा की हैं की वास्तव में इस परिवेष के पीछे कौन है? इसका उत्तर 'मै' और 'मेरा' इन दो शब्दों के बिच छुपा हुआ हैं। मै अर्थात 'अमर ज्योति स्वरुप आत्मा' जो हमारा वास्तविक रूप हैं और हमारे अस्तित्व का असली सार हैं। पंचतत्वों से बने हड्डी मांस के शरीर के जलने के पश्चात बाकि जो रह जाता हैं वह केवल 'आत्मा' ही हैं जो हमारे संस्कारो को अपने साथ ले जाकर फिरसे एक नए शरीर का आधार लेकर अपनी नयी भूमिका निभाने में जुट जाती हैं, जिसे हम 'जीवन' कहते हैं। तो संक्षेप में हमें यह समझना चाहिए की *'न हम किसीके हैं न कोई हमारा हैं'* .यदि कुछ हमारा हैं तो वह केवल आत्मा ही हैं।

अपने जीवन की विविध भूमिकाओं को निभाते हुए यदि हम अपने 'मै' की पहचान से अनभिग्न रहते हैं ,तो शुद्ध प्रेम और अनुकंपा के आधार पर कर्म करने के बजाय ,हम कोई एक विशेष भूमिका के बंधन में आकर उस चरित्र के आधार पर कर्म करने लगते हैं। फिर हम दुसरों की भूमिका को देख उनका आकलन कर उनकी आलोचना करना शुरू कर देते हैं, परन्तु ऐसा करने में हम यह भूल जाते हैं की वह भी इसी विराट सृष्टि रंगमंच पर हमारी तरह ही अपनी भूमिका अदा कर रहे हैं। निस्संदेह! जीवन जीने के लिए विविध वस्तुएं, व्यक्तियाँ एवं सम्बन्ध यह सभी आवश्यक हैं, परन्तु यही सब तत्व तो हमारे अनुलग्नकों का मूल कारण हैं जो आगे चलकर भीमकाय समस्याओं का रूप ले लेती हैं। जब हम उन अनुलग्नकों को 'हमारा' समझना शुरू कर देते हैं और अपने 'मै' के अस्तित्व को भूलकर उनके पीछे भागने लगते हैं तब हमारी हालत उस गुलाम जैसी हो जाती हैं जो मुक्ति की तलाश में जीवनभर तड़पता रहता हैं। अतः हमें यह कभी भी भूलना नहीं चाहिए की हर 'मेरे' के पीछे एक 'मै' हैं जो हमारी वास्तविक पहचान हैं। तो आइए, हम सभी स्वतंत्र,पवित्र और शांत जीवन जीने के लिए अपने मूलस्वरुप को पाने की वास्तविक यात्रा का प्रारंभ करें जिससे हमारे जीवन में स्थायी शांति और सौहार्द बने रहे।

अपने भीतर के मै के प्रति जागरूक बने

मन के पीछे चलने वाले , मन के साथ भटकना होगा।

मन घबराए, गुस्सा आए ,चोट लगे, आँसू आ जाएँ हर कुछ को ही सहना होगा।

मन के पीछे चलने वाले,मन के साथ भटकना होगा।

हम सब एक ऐसी दुनिया में जी रहे हैं , जहाँ घटनाओ का क्रम अक्सर हमारी चाहना के विपरीत ही चलता हैं । हम सब इस बात के अनुभवी हैं की कैसे आम लगनेवाली परिस्थिति अचानक से घातक वा विनाशकारी बन जाती हैं। इसका रोज़ाना अनुभव सीमावर्ती इलाकों में बसने वाले लोगों को तो प्रति दिन होता रहता हैं। ऐसे अप्रत्याशित माहौल के चलते हम यह सोचने पर मजबूर हो जाते हैं की "अब आगे और क्या होगा ?". अपने भविष्य की चिंता का यह प्रश्न आज समस्त मानव जाती के समक्ष खड़ा हो गया,फिर चाहे वह भारतीय हो ,अमरीकी हो या रुसी, सभी के समक्ष यह एक बोहोत बड़ी चुनौती हैं। आज समस्त के आगे कोई अनहोनी न होनेका प्रश्न नहीं हैं, अपितु मूल प्रश्न तो यह हैं की वह अनहोनी होनी कब हैं, और उस अनहोनी से उभरने के लिए हम कौनसा ऐसा मार्ग अपनाये जिससे हम स्वयं एवं अन्यो की सुरक्षा को बरक़रार रख सके। कहते हैं की हमारा मन अनंत शक्तियों का स्वामी हैं,अतः जो हम महसूस व् अनुभव करते हैं वह सब इस मन का खेल हैं, क्योंकि आखिरकार वह मन ही तो हैं जो खुशी, दुख, चिंता आदि जैसी भावनाओ को अपने भीतर अनुभव करता हैं। इसीलिए ज्ञानी एवं विद्वान आत्माओ ने मनुष्य को मन का गुलाम कहा हैं, क्योंकि हमारे मन के भीतर जो भी उथल-पुथल होती हैं ,उसका सीधा असर हमारी बाह्य अवस्था के ऊपर पड़ता हैं। अतः यदि हम अनहोनी घटनाओ से उद्भवित असुरक्षा की भावना से उभरना चाहते हैं ,तो हमें अपने 'मन का मालिक ' बनना होगा न की गुलाम। अपने मन के ऊपर प्रभुत्व हासिल करने के बाद हम किसी भी स्थिति में, स्थिर और संतुलित रह सकते हैं और साथ साथ दुसरो को भी स्थिर रहने में सहयोगी बना सकते हैं। परन्तु! इसके लिए पहले हमें यह समझना होगा की 'मन क्या है' और ' मन का मालिक कौन है' प्रसामान्यतः जब हम मन के बारे में बात करते हैं तब हम यह कहते हैं कि' मेरा मन', ठीक हैं ना ? अब भला वह कौन हैं जो 'मै' और 'मेरा' कह रहा है ? यदि मै कहता हूँ 'मेरा मन' तो निश्चित रूप से फिर तो मै ही अपने मन का मालिक ठहरा ना ? बराबर ? जब हम अपने आप से ऐसे गुह्य प्रश्न पूछेंगे की "मै कौन और मेरा क्या ?" तब हम अपने 'भीतर के मै' की जागरूकता में आएंगे जिसे ज्ञानियो ने 'आत्म जाग्रति ' कहा हैं। हम सभी इस मूल तथ्य को ना समजने के कारण एक बड़ी भूल कर बैठते हैं की आखिर भी वह कौन हैं जो 'मै' और 'मेरा' कह रहा है ? अतः जब हम इस 'मै' की गुत्थी को सुलझाने में कामयाब हो जाते हैं, तब हम अपने भीतर छिपी हुई आत्म शक्ति को पुनः प्राप्त कर अपने मन के मालिक बन जाते हैं,और जिसने अपने मन को जित लिया, उसने समस्त जगत को मानो जित लिया। तो आइये हम सभी अपने भीतर के मै के प्रति जागरूक बने और समस्त विश्व को इस जागरूकता से प्रकशित करे।

सृष्टि के चैतन्य बिज से संपर्क बनाएं रखें

एक दिन एक छोटे बालक ने गुलाब के झाड़ से एक गुलाब का फुल तोड़कर अपने घर पर रखे हुए गमले में लगा दिया, इस आश में की कुछ दिनों बाद उस गमले से बड़ा गुलाब का झाड उगकर बहार आयेगा ,परन्तु बच्चा इस हकीकत से बिलकुल अंजान होता हैं की "हर वृक्ष का मूल तो उसका बीज होता हैं "। अतः यदि किसी वृक्ष की एक डाली को वृक्ष से अलग करके दूसरी जगह लगाकर पानी खाद आदि अच्छे से दिया जाए तो भी वह मुरझा जाती है क्योंकि वृक्ष के साथ जुड़ाव होने से जो बल उसे मिल रहा था वह न होने के कारण उसकी वृद्धि रुक जाती है। ठीक इसी तरह यह सारी सृष्टि भी एक विशाल वृक्ष के समान है, जिसका बिज एक ही हैं, परन्तु वह अदृश्य होने कारण हम मनुष्य उसे देख या जान नहीं पाते हैं। जी हाँ !! वह चैतन्य बिज "सर्वोच्च सर्वशक्तिमान परमात्मा" ही तो हैं जो ऊर्जा के उच्चतम स्त्रोत हैं और जिनकी उर्जा से आज समस्त का जीवन गतिशील हैं। परन्तु भौतिक सुखो के पीछे लगातार भागता मानव, उसी बच्चे द्वारा की हुई भूल का अनुसरण कर अपने आप को इस विशाल सृष्टि रूपी वृक्ष से अलग समझकर अपनी अलग पहचान बनाने की महा मुर्खता कर बैठता हैं ,परिणाम स्वरुप वह हारकर ,मुरझाकर फिर जीवनरुपी इम्तिहान में विफल होकर अपना दम तोड़ देता हैं। ऐसा इसलिए होता हैं क्योंकि वह यह महत्वपूर्ण बात भूल जाता हैं की हम मनुष्य सामाजिक प्राणी है अर्थात समूह में रहना हमारी जन्मजात प्रवृत्ति है। यह बात अलग है कि समूह में रहते हुए, अपने मन की शांति के लिए हम कुछ घड़ियों के लिए एकांत का अनुभव करते हैं, परंतु समूह से पूरी तरह कट जाना या उसके समीप आने में बोझ और भारीपन महसूस करना यह फिर बीमार मानसिकता की निशानियाँ हैं। स्मरण रहे !!अकेले रहकर मानव का विकास अवरुध्द हो जाता है। जैसे तरबूज ऊपर से अलग अलग फ़ाँकों वाला दिखते हुए भी अंदर से जुड़ा रहता है उसी प्रकार हमें भी अपने अपने कार्यव्यवहार तथा ज़िम्मेवारियों की पूर्ति के लिए एकदूसरे से दूर रहकर भी भीतर से अर्थात् मन से एकदूसरे से जुड़े रहना चाहिए, यही जीवन जीने की श्रेष्ठ कला है।

यदि हम स्वयं निर्मित कारणों से या अन्य बाह्य कारणों से परमात्मा रूपी बीज द्वारा रचित श्रेष्ठ ईश्वरीय परिवार से अलग होकर रहते हैं तो हम भी फिर कुछ समय के पश्चात मुरझा जाते और हमारी खुशी गुम हो जाती है, पर यदि हम अधिक से अधिक इस विशाल वृक्ष रूपी परिवार के संबंध संपर्क में रहते हैं तो ईश्वर की दुआयें एवं बल हमें सदैव मिलता रहता है और हमारा उमंग उत्साह भी बढ़ता जाता है। इसी ईश्वरीय बल एवं दुआओं के फल स्वरुप ,हमारे जीवन से फिर सभी कमी कमज़ोरियाँ दूर हो जाती हैं। तो आज से, यह संकल्प करें की हम सदैव सृष्टि रूपी वृक्ष के चैतन्य बिज परमात्मा के निरंतर संपर्क में रहेंगे और उनकी दुवाओं एवं बल से अपना जीवन फलीभूत करते रहेंगे।

स्वयं का सम्मान करें

कहते हैं की "जीवन में नाम, मान, शान, शोहरत सब चला जायें तो कोई बात नहीं, परन्तु यदि चरित्र पर दाग लग जायें, तो मानो जीवन खत्म"। हम सभी जीवन भर अपनी चारित्रिक रक्षा के लिए जद्दो जेहत करते रहते हैं तांकि जब इस दुनिया से जाने का वक्त आयें,तो हम बेदाग होकर जायें। ठीक ऐसे ही सम्मान के बारें में भी कहा जा सकता हैं। दुनिया में ऐसा कोई नहीं जो सम्मान की इच्छा या आश न रखता हो। हम सभी चाहते हैं की हमें सदैव सभी द्वारा सम्मान प्राप्त हो,परन्तु सम्मान देना कोई नहीं चाहते सिर्फ लेना चाहते हैं। कोई भी बेआबरू वा अपमानित होकर जीना पसंद नहीं करता। जब दुसरे हमारी आलोचना करते हैं वा हमारे पीठ के पीछे यदि हमारी ग्लानी करते हैं, तब हम नाराज़ होकर या क्रोधित होकर उन्हें प्रतिक्रिया देते हैं, तो हम जैसे उन्हें स्वयं के लिए यह सिद्ध कर बताते हैं की हमारा आत्म सम्मान इतना कमज़ोर हैं जो किसीके भी पत्थर मारने से टूट जायेगा । इस दुर्बलता का मुख्य कारण हैं हमारे आत्म सम्मान की कमज़ोर बुनियाद ! जो किसीके भी मन, वचन, कर्म के व्यवहार से हिलता रहता है।

हम बड़ी आसानी से यह भूल जाते हैं की हमारे इर्द गिर्द जो भी लोग हैं उन सभी की हमारे प्रति अलग अलग राय होती हैं ,जिसके बारें में हम कभी पता भी कर नहीं पातें क्योंकि हम किसके मन में क्या चल रहा हैं यह देख या सुन नहीं सकते हैं। मान लीजिये यदि हम किसीका मन पढ़ भी ले तो क्या उनको अपनी स्वतंत्र राय रखने का अधिकार नहीं हैं ? बिलकुल हैं। इसलिए समझदार व्यक्ति वह हैं जो दूसरों की राय की फ़िक्र करने के बजाय अपने आत्म सम्मान की ऊंचाई पर स्थिर रहकर, ग्लानी को गायन, निंदा को महिमा और अपमान को स्व-अभिमान में परिवर्तित करें। अतः जब हमें अपने आप की पहचान हो जाती हैं,तब हमें दुसरो की राय पर निर्भर होने की कोई भी आवश्यकता नहीं रहती हैं।

स्वमान और आत्म-सम्मान में बोहोत गहरा रिश्ता हैं। किसी एक के बिना दूसरा संभव नहीं। हम सभी को बचपन से ही दुसरो को सम्मान देने का पाठ पढाया गया हैं। परन्तु क्या आज तक किसीने हमें यह सिखाया की हम अपने आपको कैसे सम्मान दे ? शायद नहीं! इसी वजह से आज हमारे संबंधो में सामंजस्य नहीं रहा और हम आन्तरिक एवं बाह्य संघर्षो से सदा झुझते रहते हैं। स्वमान की कमी के कारण हमारे जीवन में बेसुरापन और नकारात्मकता आ गयी हैं। अतः यदि हम स्थिर और सकारात्मक जीवन बनाये रखना चाहते हैं,तो हमारे लिए स्वमान में रहना अनिवार्य हैं। फिर हमारे भीतर से “जैसे को तैसा”, दूसरों के प्रति की गलतफहमीयां और अस्थिरता जैसी अनेक जो खामियां हैं वह निकल जाएँगी और हम बिलकुल अचल होकर जीवन का आनंद ले पाएंगे। अपने स्वमान को सशक्त करने का एकमात्र सरल उपाय हैं दुसरो को मान देना, चाहे सामनेवाला कैसा भी क्यों न हो ,परन्तु आप सभीको मान देते चलो तो आपके स्वमान में आपही इजाफा होता रहेगा। अंग्रेजी में एक मशहुर कहावत हैं की *"यदि आप सम्मान चाहते हो, तो सम्मान दो"* (गिव रिस्पेक्ट टु गेन रिस्पेक्ट)।

इसलिए सम्मान देने से हम स्वाभाविक ही उसे प्राप्त करने के हकदार बनते जाते हैं और साथ ही साथ हम अपने भीतर भी स्व के लिए मान पैदा करना सिख जाते हैं, क्योंकि जब हम दुसरो को सम्मान देते हैं,तब पहले हम कुछ घडियो के लिए उनकी प्रतिमा अपने मन में उभारते हैं,और उन चंद घडियो में हम उन्हें सम्मान देने के साथ साथ पहले अपने मन ही मन में उसे प्रत्यक्ष करते हैं। ऐसा करते समय हमें संयोग से अपने आपके प्रति भी मान की अनुभूति होती हैं। अतः यदि हम सम्मानित जीवन जीना चाहते हैं,तो हमें सदा दुसरो को सम्मान देनेका संस्कार धारण करना ही होगा।

अपने आत्म सम्मान को पुन:जागृत करें

विविधता में एकता यह हमारे भारत देश की सबसे बड़ी विशेषता हैं। करोड़ों की आबादी वाले इस देश में हर एक कुछ बनने की या कुछ कर दिखाने की तमन्ना रखता हैं।आज की इस महाभारी प्रतियोगिताओं से भरी दुनिया के बिच अपने भीतर छूपि विद्वत्ता को विश्व के समक्ष लानेका जज्बा हर एक के अन्दर होता हैं, क्योंकि हम सभी का अपना अपना अद्वितीय इतिहास, सोच और व्यवहार है जिसके साथ हम इस धरा पर जन्मे है। मगर!! इसके साथ साथ हम जन्मते ही "तुलना" करनेका गेहरा संस्कार धारण कर लेते हैं, जो आगे चलकर हमारे जीवन के लिए काफी घातक सिद्ध होता हैं। बड़े अचरज की बात हैं, परन्तु सत्य यही हैं की बचपन से ही हमें दुसरो के साथ अपनी तुलना करनेकी शिक्षा दी जाती हैं और साथ साथ उनकी शैली की नक़ल करना भी सिखाया जाता हैं, जिसके फलस्वरूप हम अपनी मूल पहचान खो बैठते हैं और हमारे हाथ विफलता के अलावा और कुछ नहीं आता। विश्वभर के मनोवैज्ञानिकों का यह मानना हैं की "तुलना करना और नकल करना, मनुष्य के आत्म सम्मान के सबसे बड़े विध्वंसक/विनाशक हैं", क्योंकि यह हमें अपनी मूल पहचान से विमुख कर देते हैं, जिसके कारण हमारा अस्तित्व बहुत सतही स्तर पर रह जाता हैं।अतः अपने आत्म सम्मान को पुनर्जागृत करनेकी पहली चाबी हैं तुलना और नक़ल करनेकी आदत को छोड़ना।इसके लिए हमें स्वयं को यह बार बार स्मरण कराना होगा की "मै अद्वितीय हूँ - सबसे अलग हूँ "। अपनी अद्वितीयता की महसूसता द्वारा हमारे भीतर अपनी कमी, कमजोरी और गलतियों को स्वीकार करनेका साहस निर्माण होगा ,जिसके फलस्वरूप हम यथार्थ आत्म परिवर्तन की प्रक्रिया की ओर अपने कदम आसानी से बढ़ा पाएंगे । सदा एक बात याद रखें की "हम सभी पहले से ही सुंदर और सही हैं" । वास्तव में यह एक अजीब विरोधाभास है क्योंकि यह सुन्दरता एक छुपे खजाने के रूप में हम सभी के भीतर छुपी हुई हैं, परन्तु हम उस तक पोहोंच पाने में असमर्थ हैं।भला ऎसा क्यों? ऐसा इसलिए क्योंकि हमें अपने भीतर गहराइ में जाने की विधि किसीने सिखाई नहीं है, जिस कारण हम वह छुपे खजाने को देख व् महसूस नहीं कर पाते।हम अपनी बाहरी सुन्दरता में इस कदर मग्न रहते हैं, की कभी हमें आन्तरिक सुन्दरता के ऊपर अपना ध्यान केन्द्रित करनेका मौका ही नहीं मिल पाता। विज्ञापनों द्वारा जो आइना हमें दिखाया जाता हैं, हम उसी में अपनी सुन्दरता को खोजते खोजते आखिर एक दिन असली सुन्दरता को खो बैठते हैं। इसलिए यदि हम अपने खोये हुए आत्म सम्मान का पुनर्निर्माण करना चाहते हैं, तो हमें आत्म ज्ञान और आत्म जागरूकता की गहरी आंतरिक प्रक्रिया को अपने भीतर कार्यरत करना होगा। परन्तु उसके लिए हमें प्रति दिन कुछ समय मौन में रहकर अपने अनंत आन्तरिक गुणों को अनुभव कर पहले स्वयं और फिर समस्त संसार को परिवर्तन कर फिरसे उसे शाश्वत सौंदर्य प्रदान करना होगा।

उद्देश्य की खोज में

हम सभी मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्य की खोज में किस न किसी यात्रा पर सदा अग्रसर रहते है। कुछ लोगों के लिए यह यात्रा बड़ी सुखद होती हैं, कुछ लोगों के लिए मुश्किल, कुछ लोगों के लिए सुख-दुःख से मिश्रित और कुछ लोगों के लिए बड़ी दिलचस्प होती हैं। सुशिक्षित समाज में जी रहे लोगों में यह एक आम धारणा होती है की हम में से हर एक के जीवन में एक उद्देश्य होना अनिवार्य हैं,वरना हमारा जीवन खोखला या बेकार हो जाता है।जब तक हमें अपने उद्देश्य का पता नहीं पड़ता,तब तक हम अपने जीवन के अन्दर कोई भी ठोस निर्णय कर नहीं पाते ,क्योंकि जीवन के हर मोड़ पर लिए जानेवाले छोटे या बड़े फैसलों का आधार हमारे उद्देश्य के ऊपर निर्भर हैं, अतः यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होंगी की *'जहाँ उद्देश्य नहीं, वहां जीवन नहीं'*। अब प्रश्न यह उठता हैं की आखिर हम अपने उद्देश्य को जाने कैसे? इसके लिए हमें केवल 'मैं कौन', इस विषय में जागरूक बनने की आवश्यकता है।

सामान्यतः हम अपनेआप को मनुष्य (शरीर) प्राणी (आत्मा) के रूप में परिभाषित करते हैं। इनमे से मनुष्य बिंदु के बारे में तो हम अच्छी तरह से वाकिफ हैं,परन्तु आत्मा जो की इस शरीर के भीतर से दुनिया को देख रही हैं एवं अपनी उर्जा से इस शरीर को चला रही हैं, उसके बारें में संभवतः बोहोत जुज लोग ही सोचते हैं और आज तक इस विषय पर गहरा रहस्य ही बना हुआ हैं।आत्मा के इस मुलभूत ज्ञान से बेखबर होकर हम अपने परिवार, संस्कृति, दोस्तों एवं जिस सामाजिक वातावरण से हम जुड़े हुए हैं, उनके द्वारा दि गई पहचान का मुखावरण पहनके जीवनभर खुदको भ्रमित करते रहते हैं,परन्तु जब यह सब बातें हमारे जीवन से वियुक्त हो जाती हैं, तब हमारा अस्तित्व केवल एक ही रूप में रह जाता हैं और वह हैं 'आत्मा' जो कभी भी मरती नहीं हैं और जिसका कभी नाश नहीं होता. ज़रा कल्पना कीजिये की पंचमहाभूतो से बना आपका शरीर धीरे धीरे गहरे-दिव्य प्रकाश में समाकर उसमे विलीन होकर एक ज्योति के रूप में परिवर्तित हो रहा हैं !! यही हमारी सच्चाई हैं.

'मै कौन हूँ'? जब इसका यथार्थ रहस्य हम जान लेते हैं तब आत्म संदेहों के बादल हट जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप हमारे भीतर स्वयं के वास्तविकता की स्पष्टता और स्वच्छता आ जाती हैं। स्पष्टता की यही शक्ति मार्गदर्शक बन हमें मानवता के लिए करुणा,दया और समभाव के साथ अपना जीवन जीने के लिए सक्षमता प्रदान करती हैं।समस्त को प्यार करना फिर हमारे लिए स्वाभाविक और अपरिहार्य हो जाता है और हम जिस उद्देश्य से इस धरा पर जन्मे हैं, उसका भी सुन्दर एहसास हमें हो जाता हैं। किसी ने सच ही कहा हैं की *'मनुष्य का स्वधर्म ही हैं समस्त को प्यार देना और खुशियाँ बाँटना'*। तो आओ ! हम सभी अपने इस उद्देश्य की निस्वार्थ भाव से पूर्ति करें और जगत को दुःख व् अशांति से सम्पूर्ण मुक्ति दिलाएं।

सच्चे नायक बने

!लहरोंसे डरकर नौका पार नहीं होती ,कोशिश करनेवालों की कभी हार नहीं होती !

कविवर हरिवंशराय बच्चन द्वारा लिखित उक्त पंक्ति का हमारे जीवन में बहुत बड़ा महत्व हैं क्योंकि हम सभी अपनी अपनी नौका में बैठकर जीवन रूपी समंदर को पार करने में लगे हैं, ऐसे मै हमारे इस सफ़र में कई बार समस्यारूपी लहरें भी आती हैं तो बड़े बड़े तूफान भी । उन विकट परिस्थितियों के बिच हमें यही कविता की पंक्ति का सहारा लेना हैं और साहस और हिम्मत से कोशिश कर आगे बढ़ते रहना हैं। जीवन में किया जाने वाला हर छोटा प्रयास उपयोगी होता है यह हमें कभी भूलना नहीं चाहिए। कई बार ऐसा होता हैं की एक बड़ी शिला को तोड़ने के लिए हम कितना भी जोर लगाते हैं,पर वह एक आघात से नहीं टूट पाती हैं, परन्तु लगातार आघात करते करते जब १०० वें आघात में उसके टुकड़े होते हैं,तब क्या यह समझा जायेगा की पहले के हमारे ९९ वें आघात व्यर्थ गए?नहीं !! उन्ही ९९ वें आघातों के फलस्वरूप तो वह शिला इतनी कमज़ोर हुई जो आखिर १०० वें आघात पर उसके टुकड़े टुकड़े हो गए। कहने का भावार्थ यह हैं की हमारे जीवन में चाहे कितनी भी असफलता क्यों न आये, परन्तु हमें अपने दृढ़ संकल्प को सदा मजबूत बनाये रखना हैं और अपना ध्यान सदैव मंजिल की ओर केन्द्रित करके रखना हैं क्योंकि आज नहीं तो कल सफलता हमें मिलनी ही हैं। कहते हैं की "हीरो जो होता हैं वह जीरो से ही उभर कर ऊपर आता हैं ", तभी तो इतिहास से हमें यह मालूमात मिलती हैं की जीवन के अन्दर महान उपलब्धियां हांसिल करने वाले सभी दिग्गज कोई नायक के रूप में पैदा नहीं हुए थे, अपितु उन्होंने दृढ संकल्प और दृढ इच्छा शक्ति द्वारा पहाड़ रूपी समस्याओं को काटकर अपने लिए एवं आनेवाली पीढ़ी के लिए रास्ता बनाया। अतः यदि हम सफलता के उंच शिखर पर बैठना चाहते हैं, तो उसके लिए हमें फौलाद जैसा मनोबल बनाना होगा जो केवल मूल्यों को अन्तर्निविष्ट करके ही संभव होगा। परन्तु २१ वी सदी की हमारी आधुनिक जीवन शैली के चलते हमने हमारे जीवन से सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को सम्पूर्ण रूप से खारिज कर दिया हैं जिसके कारण हमारी सोच ह्रासित हो गयी हैं। आज हम एक दुसरे को महज़ टेलीफोन एवं इमेल के माध्यम से ही मिल पाते हैं और हमारे मनोरंजन का ज़रिया केवल टि.वि तक सिमित होकर रह गया हैं। ऐसे में स्वाभाविक रूप से सामाजिक व पारिवारिक मेलजोल, चिंता मुक्त हास्य और एक दुसरे से सुख-दुःख बाँटना इत्यादि ..यह सब जैसे अतीत की बातें बनकर रह गयी हैं और इस हानि की भरपाई करने के लिए हमने आज जगह जगहों पर 'लाफ्टर क्लब' की स्थापना कर दी हैं। यह कैसी विडंबना हैं हमारे जीवन की! जहाँ आज हम वास्तविक खुशी एवं शांति का अनुभव प्राकृतिक रूप से नहीं कर पा रहे हैं! इन सब बातों के लिए हम अक्सर परीस्थितियो को दोष देते रहते हैं,परन्तु अपने मन की अवस्था जो सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है,उसको पूर्ण रूप से टाल देते हैं। अतः हमें दुनिया को बदलने का प्रयास करने से पहले अपने आप को बदलने का प्रयास करना चाहिए,क्योंकि कहा गया हैं की "हम बदलेंगे तो जग बदलेगा"।इसलिए कैसी भी परिस्थिति आयें पर हमें उससे कभी हार नहीं माननी हैं, अपितु दृढ मनोबल से डटकर उसका मुकाबला करना हैं और सच्चा हीरो बनकर दिखाना हैं।

तीसरा नेत्र

प्रकृति ने हम सभी को दो नेत्र, एक नाक ,एक मुख और दो कानो से नवाज़ा हैं, और हम सभी भी इन्ही अंगो के द्वारा खुदको एवं दुसरो को भी पहचानते हैं।यदि इन सभी अंगो में से कोई एक अंग को भी किसी प्रकार की क्षति या नुक्सान पोहोंचता हैं, तो वह व्यक्ति के ऊपर तुरंत ही अपंग या विकलांग जैसे टाइटिल लग जाते हैं।पर क्या हम इन अंगो से परे हमारे भीतर जो एक और अद्भुत अंग हैं उसके बारें में कभी सोचते भी हैं? ऐसा शायद ही कभी होता है,क्योंकि उसके लिए फिर अद्भुत शक्तिया भी तो चाहिए।जी हाँ ! वह अद्भुत अंग है हमारा *'तीसरा नेत्र'*, जिसे *'अदृश्य आँख'* या फिर *'बुद्धि के नेत्र'* के रूप में भी वर्णित किया गया हैं. सामान्य रूप से हमारे भौतिक नेत्रों के द्वारा तो हम भौतिक जगत का नैत्य दर्शन करते ही रहते हैं,परन्तु उनके द्वारा हम अपने 'आंतरिक स्व' को या दुसरो के वास्तविक रूप को देख नहीं सकते,क्योंकि उसके लिए हमें अपने 'तीसरे नेत्र' की आवश्यकता पड़ती हैं।

ईश्वर ने हम सभीको 'तीसरे नेत्र' के क़ीमती तोहफे से नवाज़ा हैं,परन्तु हम सभीने उसकी कीमत न जानकर उसके ऊपर 'अज्ञानता की चादर' ओढ़ ली हैं ,जिसके फलस्वरूप हमने भौतिक नेत्रों से दिखने वाले इस भौतिक जगत को ही अपना सर्वस्व मान लिया हैं.स्मरण रहे! हमारे विचारो का मूलाधार हम अपने नेत्रों से क्या और कैसा देखते हैं उसके उपर निर्भर हैं. अतः *जैसे हमारे विचार ऐसा हमारा व्यक्तित्व*. जब हमारा 'तीसरा नेत्र' अर्थात ज्ञान का नेत्र खुलता हैं, तब प्रकाश हमारे जीवन में आता हैं और हमारी सोच में परिवर्तन आना शुरू हो जाता हैं। हम स्वयं एवं अन्य के वास्तविक रूप को हमें प्राप्त हुई नई दृष्टि के द्वारा स्पष्टरूप से देखने लगते हैं। दया, सत्य और प्रेम हमारे विचारो में समाविष्ट हो जाते हैं और सर्व के प्रति हमारी दृष्टि बिना कोई द्वंद्व के स्वच्छ और आत्मीय बन जाती हैं।

अब भला इस तीसरे नेत्र को खोलने की विधि क्या ?क्या यह इतना सहज है? जी हाँ यह बिलकुल सहज हैं और उसके लिए हमें केवल ध्यान का नियमितरूप से अभ्यास करना होगा, क्योंकि ध्यान द्वारा हमें स्वयं को अधिक गहराई से समझने की शक्ति प्राप्त होती हैं जो हमें अपने आप को बहाल करने में मददरूप बनती है. ध्यान द्वारा प्राप्त शांति का अनुभव हमें हमारी मूल प्रकृति के साथ संपर्क में लाने के लिए सक्षम बनाता है और स्वयं के साथ साथ अन्य के जीवन को भी प्रबुद्ध करता है। तो आइए हम सभी नियमित ध्यानाभ्यास द्वारा अपने 'तीसरे नेत्र' को खोलकर अपने मन के अंधकार को मिटाए,ताकि विश्व के अन्दर नयी रौशनी फैले ।

जीवन में ‘जूनून’ को पुन:जागृत करें

सवार हो जायें जब सर पर जुनून की कुछ पाना हैं
रह जायेगा फिर क्या दुनिया में जो हाथ नहीं आना हैं ।

एक शब्द जो आज की युवा पीढ़ी के दिलो दिमाग पर चोबीसो घंटा छाया हुआ रहता हैं वह हैं *'जुनून'*। जी हाँ! इस शब्द को शायरों एवं गीतकारो ने भी लोगों के अन्दर दबी भावनाओं को जाग्रत करने के लिए खूब इस्तेमाल किया हैं और आज भी कर रहे हैं। हम इस तथ्य से इनकार नहीं कर सकते की आज के युवा जो भी सृजनात्मक कार्य करते हैं, उसमे वह मनोभावपूर्वक अपनी सम्पूर्ण उर्जा शक्ति को लगा देते हैं। भले ही हमारे जीवन में तकनीकी क्षमता प्रचुर मात्रा में हमें हासिल हो, परन्तु यदि हमारे जीवन में जो हम कर रहे हैं उसके प्रति जुनून न हो तो हमारा जीवन जैसे निरर्थक सिद्ध हो जाता हैं और हम बस यहाँ-वहाँ गोते खाते रहते।

हम सभीको इस बात का अनुभव हैं की जब हमारे जीवन में जुनून होता है, तो हमारी सुस्त जिंदगी जैसे रोमांचकारी बन जाती हैं। अब प्रश्न यह हैं की, हम अपनी मंद जिंदगी में जुनून को फिरसे पुन:र्जागृत कैसे करें ? हम में से ज्यादातर लोग अक्सर किसी अन्य के सपने को साकार करने में ही अपना सम्पूर्ण जीवन ख़त्म कर देते हैं या फिर दुसरो के अस्तित्व को बनाये रखने में अपना अस्तित्व ही खो बैठते हैं। पर हम ऐसा क्यों करते हैं? शायद दूसरों को खुश करने के लिए, या फिर अस्वीकृति के डर से। कारण जो भी हो, पर हमें यह समझना चाहिए की जब हमारे इरादे हमारे उद्देश्य से जुड़े हुए होते हैं, तब हम जो भी कार्य करते हैं, उसमे हमें जुनून की महसूसता होती हैं।

आज हम सभी विभिन्न दिशाओं में अपनी अनगिनत इच्छाओं की पूर्ति हेतु यहाँ वहाँ भागते रहते हैं ,जिसके फलस्वरूप हम असंतुष्ट और शक्तिहीन बनकर जीवन से हार जाते हैं। हममे यह एक बोहोत बुरी आदत हैं ,और वह हैं की हम हमेशा दुसरो के पास क्या हैं और कितना हैं उस पर ज्यादा ध्यान देते हैं और अपने पास क्या हैं और कितना हैं उससे सदा असंतुष्ट रहते हैं. *'भला उसकी साड़ी मेरी साड़ी से सफ़ेद क्यों '* वाली मानसिकता हमारी गहरी जड़ो में जैसे बसी हुई हैं।याद रखें ! हम अपने उद्देश्य के साथ तिन तरीको से कनेक्शन बना सकते हैं, वह हैं ज्ञान,समझ और कार्य *या* कर्म।

रोज़ाना हमें हजारो ख़यालात आते हैं , जिनमे से ९०% से अधिक वही होते हैं जो हमें कल भी आये थे,अतः हमें ज्ञान के लिए हमारा जो जुनून हैं, उसका पोषण रचनात्मक दृष्टिकोण और अग्रणी उद्यमों के साथ करना चाहिए. इसी प्रकार से समझ के अभाव की वजह से हम अक्सर हमारे जीवन को दयनीय बना देते हैं। मेडिटेशन के नियमित अभ्यास द्वारा इस उद्देश्य को बड़ी सहजता से पूरा किया जा सकता है, ताकि हमारे कर्म उच्च दृष्टि और अंतर्ज्ञान द्वारा समर्थित होकर दुसरो के लिए मार्ग प्रदर्शक बने।

और अंत में, हमें यह तथ्य को भूलना नहीं हैं की हम अपने कर्मो के माध्यम से खुद को प्रत्यक्ष करते हैं,इसीलिए हम जो भी सोचते हैं या महसूस करते हैं , वह हमारे कर्मो के ऊपर आधारित हैं। जब हमारे कर्म उद्देश्यपूर्ण होते हैं, तब हमारे भीतर जुनून फिर से प्रस्फुरित/प्रज्वलित हो जाता हैं जिससे हमारी जीवन अर्थपूर्ण और आनंदमय बन जाती हैं। हमें सदा यह याद रखना चाहिए की हम कितने वर्ष जिए हैं उसकी गिनती करना महत्वपूर्ण नहीं हैं! अपितु वास्तव में महत्व तो इस बात का हैं की हमने कैसे और कितनी रचनात्मकता के साथ अपने जीवन को जिया। इसलिए यदि आप अपने जीवन में रोमांच का अनुभव करना चाहते हैं तो जुनून को अपने भीतर पुन:र्जागृत करें।

तोल मोल कर बोलों

हम सभी मनुष्य प्राणी जन्मते ही अपना मुख चलाना शुरू कर देते हैं,जिसका प्रमाण हैं माँ के पेट से निकलते ही बच्चे का रोना। अतः बोलना या मुख चलाना यह हमारी स्वाभाविक क्रिया हैं जो जीवन निर्वाह अर्थ हमें करनी ही पड़ती है। यह बात और है की कभी कभी बाहर के शोर में हम इतने खो जाते हैं की ईश्वर का स्वर हमें सुनाई ही नहीं पड़ता। इसीलिए ही महापुरुषों से हमें एक उत्तम राय मिलती हैं की सप्ताह में या माह में एक दिन पूरा अवश्य मौन में रहें। परन्तु इस घोर कलयुग में जीने वाले हम सभी प्राणियों को ऐसा सौभाग्य कहाँ प्राप्त होता है!! यदि हो भी जायें तो भी हम मुख को तो बंध कर लेते हैं, परन्तु मन का बोलना हमारा बंध नहीं हो पाता। इसलिए ही तो अधिकतर डॉक्टर्स सभी मरीजों को क्या कहते हैं? की अपने मन को ज्यादा नहीं चलाओ, अर्थात मन का मौन करो। मनुष्य के पास जुबान नाम का इतना तीखा और धारदार शस्त्र हैं,जो अच्छे अच्छो को पराजित कर देता हैं। कहते हैं की बिना हड्डी की जीभ जब बोलने लगती हैं, तो "कइयो की हड्डियाँ तोड़ देती हैं "। इसीलिए ही तो हमें यह बचपन से सिखाया जाता हैं की पहले सोचो फिर बोलो,क्योंकि जैसे कमान से निकला हुआ तीर वापस नहीं आता, ठीक उसी तरह मुख से निकला हुआ वचन वापस नहीं लिया जा सकता। इसका सबसे श्रेष्ठ उदहारण हैं महाभारत की कथा जिससे हमें यह सिख मिलती हैं की कैसे एक जुबान के फिसलने से संकटकाल का निर्माण हो गया और एक ह्रदय विदीर्ण करने वाले वचन ने समस्त राजवंश का विनाश कर दिया। इसीलिए सर्वशक्तिमान सर्वोच्च सत्ता परमात्मा से हमें यह विशेष शिक्षा प्राप्त होती हैं की " मीठे बच्चों कम बोलो -धीरे बोलो - मीठा बोलो " अतः हम जब भी कुछ बोले तो हमारे वचन दुसरो के लिए सुखदायी हो, न की कांटा चुभाने वाले दुखदायी हो। समझदार व्यक्ति वोही होता हैं जो "पहले सोचता हैं फिर बोलता हैं "। समस्त संसार में ऐसे अनगिनत लोग हैं जिन्होंने केवल अपने गलत एवं कटु वचन बोलने के संस्कार के कारण अपने संबंधो में खटास पैदा कर ली हैं। इसलिए हमें सदैव सही समय और सही जगह पर सही शब्द का प्रयोग करना चाहिए। ऐसा करने से न केवल हमारा मूल्य बढेगा अपितु हम सभी के ह्रदय में सन्मानित स्थान को प्राप्त कर पाएंगे। परन्तु! यह संभव तभी हो पायेगा जब हम बोलने से पूर्व सोचने का संस्कार धारण करेंगे। क्योंकि जैसा हम सोचेंगे, ऐसे हमारे बोल निकलेंगे। इसलिए भविष्य में आनेवाली दुर्गति से बचने के लिए बोलने से पहले सोचे न की बोलने के बाद।

अच्छा श्रोता बने

संसार में हर कोई चाहता हैं की ''मेरी बात कोई सुने' , फिर चाहे वह मनुष्य हो या प्राणी सभी को किस न किस रुप में किसी सहारे की आवश्यकता पडती ही हैं। अमूमन हम जीवन में आने वाली हर छोटी-बडी बात को सकारात्मक या नकारात्मक दृष्टि से देखते है। हर घटना के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोन रखने से हमारी अवस्था स्थिर, शांत, संयमी और एकरस रहती हैं। इसके विपरीत नकरात्मक दृष्टिकोन अपनाने से हम अशिष्ट, क्रोधी और हलचल में रहते है। सकारात्मक विचारों के अभाव के कारण हम दुसरों की बाते न ध्यान से सुनते है और ना ही उनकी बातों को महत्व देते है, जिसके फल स्वरुप हम उन्हें पूरी तरह समझ नहीं पाते हैं। अतः अगर हमें अच्छा संम्प्रेषक/संचारक बनना है तो हमें दूसरों की बातें एकाग्रता से सुनने की कला अपने अंदर धारण करनी होगी, अन्यथा हम उनमें जो परिवर्तन देखना चाहते है वह देख नही पाएंगे।

किसी भी बातचीत में अगर एक तरफ का ही संभाषण होगा तो कभी भी संबंधो में मधुरता नहीं आ पाएंगी। देखा गया है की दूसरों की बातों को न सुनने से ही अक्सर करके समाज में गलतफहमी, मनमुटाव और गिले-शिकवे बढ जाते हैं जिसका परिणाम हम सभी टूटे-बिखरे हुए परिवारों के रुप में आज देख रहे हैं। तो ''दूसरों की न सुनने की इसी एक कमी' के कारण कई संबंध टूट जाते है और उनमे कटूता आ जाती है।

अब प्रश्न यह आता हैं की अच्छा श्रोता कैसे बना जाए? जी हाँ, इसका सरल उपाय है कि अपने भीतर की नकारात्मक वृत्तीयों को त्याग देना और हर घटना को सकारात्मक दृष्टिकोन से देखना अर्थात हर घटना में छिपे हुए कल्याण को ढूँढना। अतः यदि हम जीवन में सदा खुश रहना चाहते है तो जीवन में आने वाली हर विकट परिस्थिती को हमें निष्पक्षतापूर्वक देख आगे बढते रहना होगा, क्योंकि कहते हैं की'' पानी बहता भला और साधू चलता भला' इसीलिए यदि हमारे कदम किसी परिस्थिती के प्रभाववश थम गयें, तो हम निराशा और दुःख की गहरी खाई में गिर जायेंगे। स्मरण रहे! सकारात्मक दृष्टिकोन बिना आज के यह तकनीकी-आधुनिक युग में जीवन जीना हमारे लिए मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन बन जाएगा और इसका सबसे ज्यादा खामियाजा और किसीको नहीं, बल्कि केवल हमें ही भुगतना होंगा। तो क्यों हम भुगतें? क्यों हम ही दुःखी हो? परमात्मा द्वारा प्राप्त हुए इस अमूल्य जीवन में दुःखी होकर घूट-घूट कर जीना भी कोई जीना है? नहीं!! यह सरासर अपने आपसे ना इंसाफी हैं। तो क्यों न हम इस अनमोल जीवन का भरपूर आनंद ले, जो हमें केवल एक ही बार प्राप्त होता। तो चलो आज से हम सब यह प्रण ले की जब भी हमारे साथ कोई वार्तालाप करेगा तब हम धैर्यतापूर्वक पहलें उनकी पूरी बातें सुनेगें, और फिर उनकी सुनी हुई बातों को समझकर धीरज और विवेक से उनको प्रतिसाद देंगे, अतः पहले सुने फिर सुनाएँ।

बदलते समय के साथ मूल्यों का जतन करें

संस्कृति प्रधान भारत देश में आदिकाल से मूल्यों के जतन के उपर बड़ा जोर दिया जाता था,जाता हैं और आगे भी दिया जायेगा। हम भारतवासियों को बचपन से ही मूल्यों की शिक्षा गुरु, दादा-दादी एवं माता -पिता के द्वारा प्राप्त होती रही है,और आज भी हो रही है । अपने मूल्यों के जतन अर्थ कई बार हम मरने पर आमादा हो जाते हैं। यद्यपि आज कई लोग भौतिक लाभ हेतु अपने मूल्यों का सौदा कर रहे हैं, परन्तु फिर भी भारत वर्ष में आज भी कई ऐसे लोग हमारे बिच आदर्श के रूप में मौजूद हैं, जिन्होंने भौतिक विकास के साथ साथ अपने भीतर दैवी एवं मानवीय मूल्यों को संजोकर रखा हैं। इन्ही आदर्शों के कारण ही तो आज हमारा देश सफलता की नई ऊँचाइयों पर पोहोंच पाया हैं, वरना चरम भौतिकवाद ने तो हमारे मूल्यों एवं संस्कृति को कब का ख़तम कर दिया होता। समस्त विश्व आज बहुत अशांति और भ्रम की स्थिति में है, क्योंकि सत्ता के नशे में चूर मानव ने परमात्मा के बदले अपने आप को ही सर्वोच्च सत्ता की उपाधि दे दी ,जिसके फलस्वरूप आज हम करोड़ों की संख्या में नास्तिकों की पीढ़ी को देख रहे हैं। अपने निजी स्वार्थ के लिए आज हम हर छोटी छोटी बातों पर एक दुसरे से लड़ पड़ते हैं। हमने "मै-मै " के पीछे भागते भागते "हम" शब्द को जैसे बिलकुल भुला ही दिया है। संयुक्त परिवार प्रथा यह भारत देश की सबसे बड़ी विशेषता रही हैं, जिसमे परिवार का हर सदस्य सुख-दुःख की हर परिस्थिति का मुकाबला एकजुट होकर करता था, परन्तु आज हम देख रहे हैं की शहरीकरण के चलते "एकल परिवारों" का ज़माना आ गया हैं, जहाँ बड़े बुज़ुर्गो की गैर मौजूदगी में एक असंतुलित जीवन का निर्माण हो जाता हैं। ऐसे हालातों के बिच जी रहे लोगों को यह भी नहीं सूझता की हम अपनी ख़ुशी किससे बाटें और हमारे ग़म किसे सुनाएं। बचपन में हमें एक महत्वपूर्ण शिक्षा दी जाती हैं की "जल्दी सोने और जल्दी उठने का संस्कार मनुष्य को स्वस्थ ,बुद्धिमान और समृद्ध बनाता हैं ", मगर आज हम युवाओं की जो हालत देख रहे हैं, वह बिलकुल विपरीत हैं। आज का युवा तो पूर्ण रात्रि जाग्रत अवस्था में रहकर फिर सूर्योदय होते ही विश्रामावस्था में चला जाता हैं। ऐसी अप्राकृतिक जीवन शैली के फलस्वरूप न वह सूर्योदय का लाभ ले पाता हैं और न वह शारीरिक व्यायाम कर पाता ,जिसके परिणामस्वरूप वह खराब स्वास्थ्य का शिकार बन जाता हैं। इन हालातों के मद्दे नज़र हमें जितना हो सके उतना मूल्यों को सुद्रढ़ करने पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, क्योंकि इन्ही मूल्यों के ऊपर हमारे कर्म आधारित हैं, अतः जिनके मूल्यों की बुनियाद मजबूत हैं, उनका जीवन भी सदैव स्थिर और सुखी रहता हैं। बचत और त्याग करने का हमारा गुण आज हमारे जीवन से सम्पूर्ण गायब हो गया हैं। आज हर कोई भोग-विलास के पीछे व्यर्थ खर्च करके अपना अमूल्य जीवन बर्बाद कर रहा हैं। इसके पहले की युवा पीढ़ी धन और सत्ता की लोलुपता में अपने मार्ग से दिशाविहीन हो जायें,हमें,विशेषतः शिक्षाविदों और अध्यात्मवादीओ को उन्हें जीवन का सही मार्ग दिखाना चाहिए और उन्हें हमारे देश की समृद्ध परंपरा से अवगत कराके यह महत्वपूर्ण शिक्षा देनी चाहिए की हमारा " वास्तविक धन" एवं पूंजी हमारे "मुल्य" हैं, अतः निष्ठापूर्ण उनका जतन करें क्योंकि इन्ही मूल्यों के जतन द्वारा एक दिन नए विश्व का निर्माण होगा। तो चलिए !! आज से हम सभी यह प्रण करें की *"प्राण जायें पर मुल्य न जायें "*

बदलते मूड का नियोजन

वर्तमान समय पल पल बदलते हुए वातावरण में हम सभी जी रहे हैं। ऐसे मे न चाहते हुए भी हमारा मूड निराशा या उदासी का शिकार बन जाता हें। कई बार सबकुछ अच्छा व अनुकूल होने के बावजूद भी हम सच्चे आनंद की अनुभूति नहीं कर पाते है। अपने मूड को सदा अच्छा एवं ख़ुशी मे रखने की चाहना तो हम सभी रखते हैं,परन्तु क्या यह वास्तव में संभव हैं? इसका दारोमदार तो स्वयं हमारे पर ही हैं, क्योंकि चाह हैं वहां राह हैं।

देखा गया हैं की हमारे बदलते मूड का गहरा प्रभाव हमारे संबंध-संपर्क में आने वालों पर एवं हमारे स्नेहियों पर भी पड़ता हैं। ज्ञात रहे! किसी भी दु:खी व् अशांत व्यक्ति के संपर्क में रहना कोई पसंद नही करता। ऐसे में,जब कोई अपना हमें सांत्वना देने की कोशिश करता हैं, तो हम और भड़क उठते हैं, क्योंकि ऐसे समय पर हम अपने अशांत मूड को सभी के समक्ष जायज़ ठहराने की पूर्ण कोशिश में रहते हैं, इसीलिए हमें हर कोई शुभचिंतक हमारा दुश्मन लगता हैं। लेकिन हर चीज़ की कोई हद होती हैं, अत: हमें कहाँ न कहाँ बिंदु लगाना सीखना चाहिए और अपने आप से यह कहना चाहिए की बस करो !! बस!!! इसके पश्चात हमें ऐसे कार्यो मे अपना मन लगाना चाहिए जिससे हमें ख़ुशी मिले, साथ साथ ऐसे लोगों का संग रखना चाहिए जो सदैव खुशमिजाज़ रहते हैं। ऐसा करने से हमारी स्थिति और मूड अच्छे रहने की सम्भावना बढ़ जाएगी।

जब हमारी अवस्था स्वस्थ हो जाती हैं,तब हमें आत्मनिरीक्षण कर उन तत्वों एवं कारणों के बारें में सोचना चाहिए जो हमारी अवस्था बिगाड़ने के निम्मित बने। क्या कोई व्यक्ति,परिस्थिति या घटना से प्रभावित होकर हमने अपना मूड बिगाड़ा था? यदि हम किसी को दोषी ठहराते भी हैं तो क्या उससे कोई फायदा हमें मिलेगा? अपितु ऐसा करने से हम बाह्य तत्वों को हमारे ऊपर हावी होने का जैसे एक मौका दे देते हैं, इसीलिए किसीको दोष देने के बदले हमें स्वयं अपनी अवस्था की जिम्मेवारी खुद लेनी चाहिए। अंतर्मुखी बनकर अपने अतंरमन में उत्पन्न होने वाले भाव एवं भावना को समझें। स्वस्थिति में रहकर पल-पल बदलते मूड, चिडचिडापन और निराशा के कारण को जान लें। यह सब करने के पीछे का आशय यही हैं की हम स्वयं अपने मूड और अवस्था के मालिक बने, ताकि हम सदा आनंद और ख़ुशी मे अपना जीवन व्यतीत करें। इसके लिए हमें अपने दिन की शुरुवात एक सकारात्मक विचार से करनी चाहिए की ”आज चाहे कैसी भी परिस्थिति हो, मै अपनी स्वस्थिति में रहकर अपने मूड का मालिक बन सदा खुशी में रहूँगा/रहूंगी”।

चिंता नहीं-*चिंतन करें*

वह आज के इस महा-कलयुग की सबसे साधारण मानसिक क्रिया हैं। मनुष्यों के मानसिक शक्ति का दुरूपयोग करनेवाली वह आदत हैं। इसे आप हम रोजाना अपने जीवन में करते हैं और अपना बहुमूल्य समय नष्ट करते हैं। बताइए क्या हैं वह क्रिया? जी हाँ !! उसे कहते हैं "चिंता"। विश्व मे ऐसा कोई प्राणी नहीं होगा जिसने कभी चिंता नहीं की हो। चाहे बच्चे, बूढ़े, जवान, सभी ने चिंता की चिता पर बैठकर समय समय पर अपने आपको जलाया हैं। चिंता करना तो जैसे हम मनुष्यों का स्वभाव बन चूका हैं।

कई लोगों का मानना हैं की चिंता करना तो अच्छा हैं ना ? क्योंकि चिंता करने से आप सामनेवाले के प्रति अपना प्यार एवं स्नेह जताते हो ऐसा उन्हें लगता हैं। कई फिर ऐसा भी सोचते हैं की चिंता करना तो दुरान्देशी लोगो का बोहोत बड़ा गुण हैं। यह सभी भिन्न भिन्न मान्यताओ के बिच हमें यथार्थ वास्तविकता से अवगत होना बहुत ज़रूरी हैं और वह सत्य ये हैं की "चिंता हमारे काल्पनिक संकल्पों की उपज हैं"।जो हमारे भीतर की कुदरती चेतना एवं रचनात्मकता को सम्पूर्ण रीती से नष्ट कर देती हैं।

सर्वाधिक आश्चर्य की बात यह हैं की हममें से अधिकतर लोग यह तथ्य से वाकिफ हैं की चिंता करने से हमारे समय और शक्तियों का क्षय होता हैं,बावजूद उसके हम उससे मुक्त नहीं हो पाते हैं। इसका सबसे मुख्य कारण यह हैं की पीढ़ी दर पीढ़ी से चिंता करने की यह एक प्रथा चली आ रही हैं। बचपन से ही माता-पिता बच्चों में यही संस्कार डालते हैं की "चिंता करना अच्छा हैं,क्योंकि इससे आपका स्नेह-प्यार सिद्ध होता हैं। परन्तु यदि हम एकांत मे बैठकर सोचे तो हमें यह ज्ञात होगा की चिंता हमारे अन्दर डर की भावना उत्पन्न करती हैं,जबकि परवाह करना या देख-भाल करना वह हमारे अन्दर प्यार की भावना उत्पन्न करती हैं। अतःइन दोनों मे *(चिंता और देख भाल)* ज़मीन आसमान का फर्क हैं।

क्या अपने कभी ग़ौर किया हैं की हम किसी के प्रति चिंतित क्यों होते हैं? उसका कारण क्या? ग़ौर करनेपर आपको स्वयं महसूस होगा की वास्तव मे हम स्वार्थवश अपनी खुद की ही चिंता करते हैं न की किसी और की। इसका मुलभुत कारण है “हमारे अन्दर की असुरक्षा की भावना” जो अन्दर ही अन्दर हमें परेशान करती रहती हैं और उससे मुक्ति पाने के लिए हम चिंता का माध्यम अपनाते हैं। आजकल हम अख़बार/टेलिविज़न के माध्यमों से कई बुरी ख़बरों को पढ़कर/देखकर अन्दर ही अन्दर यह काल्पनिक भय मे जीते आये हैं। हमें सदा यही लगता हैं की कहीं आज मेरे साथ कुछ बुरा तो नहीं होगा? कोई अप्रिय घटना का भागिदार मै तो नहीं बनूँगा? ऐसी मनस्थिति के साथ जीना कई लोगों को अब जैसे मुश्किल लगने लगा हैं। तो क्या वर्तमान हालातों को देखते हुए यह असुरक्षितता से बहार निकला जा सकता हैं *? क्यों नहीं ?* अवश्य निकला जा सकता हैं! कहते हैं जहाँ चाह हैं वहां राह हैं।

अतः चिंता मुक्त होने का रामबाण इलाज हैं "वर्तमान मे जीना सीखे"। नकारात्मक भविष्य एवं पीड़ादायी भूतकाल के बारे मे न सोचकर केवल अपने उज्वल वर्तमान पर ध्यान केन्द्रित करें।

!!याद रखें !!शांति की अनुभूति हमें केवल "आज"(वर्तमान)मे हो सकती हैं,हम केवल आज मे जी सकते हैं, इसीलिए अपने आज के बारें मे सोचे और साथ साथ दुसरो के लिए सदैव शुभ भावना और शुभ कामना रखें, ताकि उनका आज भी प्रकाशमय एवं सुखमय बने।

टेक इट इजी

वर्तमान परिपेक्ष में युवा पीडी के मुख से जो 2 शब्द अक्सर सुनाई पड़ते हैं वेह हैं "टेक इट इजी " और "जस्ट चिल्ल "। पर क्या रोज़ बरोज़ के व्यावहारिक जीवन की आपा-धापी के बिच "टेक इट इजी" या "जस्ट चिल्ल " वाला रवैया संभव हैं? यह विषय चिंतन योग्य हैं, क्योंकि नकारात्मक अनुभवों और अशांतिग्रस्त परिस्थितियों के बिच रहकर स्वयं को हल्का और आसपास के वातावरण को शांत रखना यह आज के युग में सबसे बड़ी चुनौती है। इसके लिए हमें सर्वप्रथम अपने अन्दर छुपी- दबी हुई *आत्मिक शक्ति* को उजागर करना होगा, क्योंकि यही वो उर्जा हैं जिससे हम जीवन में आनेवाली हर चुनौतियों का सरलता से मुकाबला कर सकते हैं।

कहते हैं, किसी भी व्यक्ति का मानसिक संतुलन उसके इर्द गिर्द रहनेवाली व्यक्ति, वस्तु एवं परिस्थिति की ओर वह किस नज़र से या दृष्टिकोण से देखता हैं उस पर निर्भर करता हैं। किसी विद्वान दार्शनिक ने कहा है कि “*हम परिस्थिति को बदल नही सकतें लेकिन उनके प्रति देखने का अपना दृष्टिकोण अवश्य बदल सकते हैं*” परन्तु, देखा गया हैं की जब वास्तविक परिस्थिति हमारे समक्ष आती हैं, तब हमारे मन में बसे नकारात्मक पूर्वग्रहों के कारण सकारात्मक परिवर्तन लाना हमारे लिए मुश्किल हो जाता हैं। इसलिए ही ऐसे कहा जाता है की “जैसा सोचेंगे वैसा बनेंगें”।

हमारे दृष्टिकोण का बीज हैं हमारी विश्वास प्रणाली और हमारी विश्वास प्रणाली की सबसे बड़ी त्रुटी हैं "देह अभिमान" अर्थात स्वयं को अजर-अमर अविनाशी आत्मा समझने के बजाय विनाशी हड्डी मांस का शरीर समझना। यह विचारधारा ही आज के मनुष्य के दुःख का मूल कारण हैं अपितु समाज में हो रहे सारे दुष्कर्मो का कारण भी यही देह की दृष्टी हैं । अतः हमें यह ज्ञात होना चाहिए की ज्योतिस्वरूप चैतन्य आत्मा का स्वाभाविक गुण हैं प्रेम,शांति और सुख।इसलिए जितना हम अपने आत्मिक स्वरुप की स्मृति में रहकर देह को एक साधन समझकर कार्य में लायेंगे, उतना हम इजी एवं निश्चिंत रहेंगे और दूसरों को भी इजी और निश्चिन्त रख पाएंगे।

अनासक्त वृत्ति द्‌वारा तनावमुक्त जीवन

आसक्ति और अनासक्ति मनुष्य जीवन की 2 मुख्य वृत्तियाँ मानी जाती हैं। आज हम जो हैं उसका कारण भूतकाल मे किये हुए हमारे ही कर्म हैं, और भविष्य मे हम जो बनेंगे उसका आधार हमारे वर्तमान काल मे किये जाने वाले कर्मो पर निर्भर हैं। सुनने मे बड़ा अजीब लगता हैं,परन्तु यह एक सत्य हकीकत हैं की हमारे जीवन के निर्माता हम स्वयं हैं न की कोई और। आसक्तिवश कई बार हम जाने अनजाने मे इस जगत की मिथ्या बातों के लगाव में आकर अपने आप को एवं दुसरों को समस्याओं और चिंता की खाई में धकेल देते हैं ,जिसके फलस्वरूप हम अपना मार्ग खोकर दिशाविहीन हो जाते हैं। इसलिए सुखमय जीवन जीने के लिए अनासक्त वृत्ति को अपने जीवन मे धारण करना अति आवश्यक हो जाता हैं। परन्तु क्या इस मोह-माया वाली दुनिया मे रहते हुए अनासक्त होना संभव हैं? !क्यों नहीं! यदि यथार्थ विधि अपनाई जाये तो अवश्य संभव हैं।

अनासक्त बनने का अर्थ यह नहीं हैं की हम न्यारे बनकर इस संसार का त्याग कर कहीं दूर जंगलो मे जाकर बैठ जायें !!नहीं!! हमें सभी के बिच रहकर अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए सभी के साथ "न्यारे और प्यारे" बनकर अपना जीवन व्यतीत करना हैं। यथार्थ न्यारापन धारण करने से हमारी विचारधारा सुदृढ़ बनती हैं, जिसके फलस्वरूप हम अपने आसपास होनेवाली अच्छी या बुरी बातों से परे हो जाते हैं एवं हमारे बदलते मूड और मनस्थिति पर नियंत्रण पाकर हम आन्तरिक सुख और शांति की प्राप्ति कर पाते हैं। इसलिए शांत व् अनासक्त जीवन के लिए स्व-नियंत्रण व् स्व-अनुशासन आवश्यक हैं। न्यारा व्यक्ति सदैव सभी का प्यारा बनता हैं , वह कभी भी कोई बाह्य परिस्थिति के प्रभाव से विचलित नहीं होता अपितु वह तो नयी दिशाओं और सुअवसरों की खोज मे सदैव अग्रसर रहता हैं।

वास्तव मे,अनासक्त वृत्ति की कमी को ही आसक्ति कहा जाता हैं। आसक्ति वश हम भयभीत होकर जीवन में आनेवाली हर चुनौती से मुख मोड़कर भागने लगते हैं, जबकि अनासक्त होकर हम निडरता और धैर्यता से हर चुनौती का अपनी सकारात्मक सूझ-बुझ से सामना करते हुए आगे बढ़ सकते हैं। अतः तनावमुक्त और सुखमय जीवन जीने का सरल मार्ग यदि कोई हैं ,तो वह हैं "अनासक्त वृत्ति" की धारणा।

हँसते रहो - मुस्कुराते रहो

इस बात में कोई मत मतान्तर नहीं है की "तनाव" आज २१ वी सदी में जीनेवाले मनुष्य का निरंतर साथी बन गया है। हमें आज तनाव में जीने की इतनी आदत पड़ गयी हैं की हम प्रति दिन तनाव के साथ ही उठते हैं और प्रति रात्रि को तनाव के साथ ही सोते हैं। भला ऐसा क्यों? इसका सीधा कारण हैं अनिश्चितताओं और अन्याय से भरे विश्व की भयानक स्थिति, जहाँ पे बड़े बड़े ताकतवर देश भी गहरी असुरक्षा की पीड़ा का अनुभव कर रहे हैं। तो क्या इन अनिश्चितताओं और असुरक्षा की पीड़ा से हम निजात नहीं पा सकते ? क्या हमें सदैव तनाव रूपी साथी के साथ ही बाकि का अपना जीवन व्यतीत करना होगा ? कोई तो उपाय होगा ?

तनाव से छुटकारा पाने के लिए कई तरीके हैं इसमें कोई दो राय नहीं ,परन्तु उन सभि मे से सबसे सरल, आसान और सस्ता तरीका हैं "हंसी" या "खिलखिलाहट". कहते हैं की "तुम हँसो तो विश्व तुम्हारे साथ हँसेगा" (Laugh & The World Will Laugh With You) ,अर्थात हसता हुआ चेहरा अच्छे अच्छो की मनःस्थिति को ठीक कर देता हैं,क्योंकि हँसना मानव अभिव्यक्ति का एक ऐसा शुद्धतम रूप हैं जो सभी उम्र,जाति और धर्मों के लोगों को एक साथ बांध कर रखता हैं, तभी तो किसी गीतकार ने अत्यंत सुंदर गीत की यह पंक्ति लिखी है की " घर से मस्जिद है बोहोत दूर चलो यूँ कर ले ,किसी रोते हुए बच्चे को हंसाया जायें ". चिकित्सकों के अनुसार हँसना मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा प्राकृतिक पोषण है।

तभी तो अधिकतर मरीजों को आज सभी डॉक्टर्स यही सलाह देते हैं की खुश रहिये और मुस्कुराते रहिये। एक अच्छी हंसी हमारे जिगर को हिलाती हैं और तुरंत ही हमें तरो ताज़ा कर देती हैं, साथ ही साथ हमारे शरीर का रक्तचाप (ब्लड प्रेशर) और तनाव के हार्मोन को कम कर हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को और मजबूती देती है। हम सभी भली भांति इस तथ्य से वाकिफ हैं की हँसी तनाव को सम्पूर्ण रूप से मार देती हैं ,बावजूद उसके हम स्वयं को आत्म-घाव देकर दण्डित करने से बाज़ नहीं आते। यह जानते हुए भी की इससे सस्ता और सरल उपाय तनाव से छूटने का और कोई नहीं हैं ,हम अपने ही पैरो पर कुल्हाड़ी मारते रहते हैं और स्वयं एवं दुसरो के लिए तनाव पैदा करते रहते हैं।

हंसी का सबसे बड़ा फायदा यह हैं की वह अचानक हमारे भीतर एक गति वा संचालन निर्माण कर देती हैं जिससे हम खिसियाकर उछलने लगते हैं और हमारे शरीर को आराम मिलता हैं, परिणामस्वरूप फिर हमारे शरीर के भीतर बसे प्राकृतिक दर्द निवारक "एंडोर्फिन" का निर्मोचन होता हैं। कई लोग पूछते हैं "हम क्या सारा दिन हँसते ही रहे?तांकि लोग फिर हमें पागल बुलाना शुरू कर दें ?" नहीं !! सारा दिन जोर से हँसने की कोई आवश्यकता नहीं हैं , केवल हमारी एक मुस्कुराहट ही अद्भुत काम कर सकती हैं।अतः प्रति दिन प्रातः जब हम उठे ,तब एक मीठी मुस्कराहट के साथ उठे तांकि हमारे चेहरे की चमक देख औरो का भी दिन अच्छा और ख़ुशी से गुज़रे। तो आज से क्या करेंगे ? "सदैव हँसते रहो - मुस्कुराते रहो और सदैव तनावमुक्त रहो "

इतना गुस्सा क्यों ?

समस्त विश्व में आज जहाँ देखो वहां सभी लोग गुस्से में हैं। लेकिन क्यों हम सब इतने गुस्से में हैं? किस बात का गुस्सा है हमें? सामान्य रूप से जिन कारणों से हमें क्रोध आता हैं, वह हैं कुंठा, मानसिक उत्पीड़न या अत्याचार, निराशा या आशाभंग और कथित खतरों के हालात। परन्तु इन सभी भावनाओ का मुख्य स्त्रोत हैं हमारी अतृप्त उम्मीदें या इच्छाएँ, अतः यदि हम "इच्छा मात्रम अविद्या " का पाठ पक्का कर ले, अर्थात अपनी इच्छाओ के ऊपर नियंत्रण पानेकी विधि सीख लें, तो हम बड़ी सहजता से अपने गुस्से के ऊपर काबू पा सकते हैं।तभी तो कहा जाता है की "इच्छा, इंसान को अच्छा बनने नहीं देती हैं "।

बुनियादी तौर पर हम क्रोध को दो तरीकों से अनुभव करते हैं। हम या तो अपने आप से क्रोधित होते रहते हैं , या किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति हमारा क्रोध निर्देशित होता है। दुनिया में सभी लोग क्रोध को वश करने के लिए या उसपर नियंत्रण पाने के लिए कई तरीके आजमाते हैं, परन्तु वे उसमे सफल नहीं हो पाते हैं, क्योंकि क्रोध का कुशल प्रबंधन करना यह सहज गति से होनेवाली एक रचनात्मक प्रक्रिया हैं,जिसमे 'सांप भी मरे और लाठी भी ना टूटे' उसका बड़ा ध्यान रखा जाता हैं। हम सभी इस तथ्य से अवगत हैं की मानव सोच प्रक्रिया अविश्वसनीय रूप से तेजी से चलती है, ऐसे मे स्वाभाविक रूप से क्रोध वश हम किसी बड़ी दुर्घटना का शिकार बन सकते हैं, इसीलिए क्रोधवश कुछ बोलने या करने से पहले :

♦ अपनी क्रोध की भावनाओं को पहचानें और उसका स्वीकार करें।
♦ अपने क्रोध के लक्ष्य एवं कारण को पहचाने।
♦ उस परिस्थिति से बहार आने के लिए एकाधिक विकल्पों पर विचार करें, उनके संभवित् अंत परिणामों के साथ।
♦ सर्वश्रेष्ठ विकल्प को चुनें, उसे अमल में लाये और उसका पालन करे।

अनुभव के आधार से देखा गया हैं की "राजयोग", क्रोध को काबू करनेकी जद्दोजेहत करनेवाले लोगो के लिए एक बड़ा वरदान सिद्ध हुआ हैं, क्योंकि वह हमें अपने मन को प्रशिक्षित करनेका बड़ा सरल तरीका प्रदान करता हैं जिससे हमारा मन शांत एवं शीतल बन जाता हैं। पिछले कई वर्षों में किये हुए वैज्ञानिक अनुसंधान ने यह संकेत दिया है की नियमित रूप से ध्यान के अभ्यास द्वारा हम हमारे जीवन का संचालन करने में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने के लिए सक्षम बन जाते हैं। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया की मानव मस्तिष्क इतना भी अपरिवर्तनीय नहीं हैं जैसा पूर्वकाल के वैज्ञानिकों ने मान लिया था, अपितु उनका मानना यह हैं की हम वास्तव में हमारी भावनाओं एवं विचारों पर अधिक नियंत्रण रख पाने में सफल है। अतः ध्यान का अभ्यास हमें अपने भीतर की ओर मोड़ देता हैं, जिसके फलस्वरूप हम गहरी शांति के अनुभव में लीन हो जाते हैं। तो क्या आप भी ऐसी गहन शांति की अनुभूति अपने जीवन में नहीं करना चाहते? की फिर ऐसे ही अपनी जीवन गुस्सा करते-करते ही बिताना चाहते हैं ? इसलिए !! आज से गुस्सा करने से पहले इतना ज़रूर सोचना की यह गुस्सा आपकी सम्पूर्ण उर्जा को निचोड़ कर रख देगा। अतः गुस्सा करें या ना करे , इसके निर्णयकर्ता तो आप स्वयं हो , कोई और नहीं।

सब रोगों की एक दवा 'योग'

वर्तमान अनिश्चितता और अराजकता से ग्रस्त संसार में मेडिटेशन (ध्यान) बहुत सारे लोगों के जीवन में शांति और अच्छे स्वास्थ्य को प्राप्त करने का एकल बिंदु स्रोत बन गया हैं, क्योंकि मेडिटेशन द्वारा प्राप्त विभिन्न लाभों से लोग अपने जीवन में असाधारण परिवर्तन का अनुभव कर रहे हैं। मेडिटेशन हर कोई अपने अपने लक्ष्य पूर्ति हेतु ही करता हैं। कोई शांति प्राप्त करने के लिए उसका अभ्यास करते हैं, कोई स्व नियंत्रण के लिए, कोई अपनी आन्तरिक शक्ति बढ़ाने के लिए तो कोई फिर मौन का अनुभव करने के लिए। लेकिन, इन सभी इरादों में से, सबसे महत्वपूर्ण चीज़ जो हैं, जिसके पीछे हम जिंदगीभर ना-ना प्रकार के प्रयास करते रहते हैं, वह हैं शांति या मन की शांति। वैसे देखा जायें तो इन दोनों में ज्यादा कोई फर्क नहीं हैं ,लेकिन, करीबी समिक्षा करने पर ऐसा व्यतीत होता हैं जैसे यह दोनों चीज़े एक दुसरे से भिन्न हैं,क्योंकि शांति का अनुभव तो अमूमन हर कोई कुछ घडियो के लिए कर लेता हैं,परन्तु मन की सच्ची शांति को प्राप्त करना यह थोडा कठिन कार्य है जिसके लिए असीम धैर्य एवं दृढ़ता की आवश्यकता पड़ती हैं।

इसमें कोई दो राय नहीं हैं की जीवन के किसी न किसी मोड़ पर, हम सभी ने कुछ क्षणों के लिए शांति का आनंद उठाया ही है, क्षणभंगुर ही सही, लेकिन हमने कभी समुद्र तट पर बैठे बैठे दूर क्षितिज को देखते हुए या कोई विशाल पर्वत की चोटी को देखकर अपने भीतर शांति का अनुभव अवश्य किया ही है। पर क्या ऐसी क्षणिक शांति का अनुभव पर्याप्त हैं ? नहीं! वास्तविक रूप से यदि देखा जायें तो हमें स्थायी शांति की अनुभूति करने के पीछे हमारा सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित करना चाहिए ,क्योंकि चंद घडियो की शांति तो पल भर में गायब हो जाती हैं, अतः हमें ध्यान धारणा के अभ्यास द्वारा अपने भीतर स्थायी शांति के पुंज को विकसित करना चाहिए ,जिससे हम निरंतर स्वयं एवं संसार के अन्दर शांति के प्रकम्पन फैला सकें।

अधिकांश लोगो का यह मानना हैं की व्यावहारिक जीवन में भिन्न भिन्न परिस्थितीयों के बिच संघर्ष करते हुए हर पल ध्यान करनेकी तकनीक कारगर सिद्ध नहीं होती। मिसाल के तौर पर यदि ट्रेन मे सफ़र के दौरान हमारी किसी अन्य यात्री के साथ बैठने की जगह से सम्बंधित लम्बी बहस छिड़ जाती हैं, तो क्या ऐसे समय पर हम ध्यान का अभ्यास कर अपने भीतर के गहरे अवकाश में जाकर अस्थायी रूप से खोई हुई शांति को हासिल करने में जुट जायेंगे ? क्या यह कर्म व्यावहारिक होगा? शायद नहीं। तो फिर ऐसी परिस्थितियों में हम ऐसा क्या करें की जिससे पहले किये हुए ध्यान के माध्यम से प्राप्त शांति को हम संकट के समय पर यथार्थ रीती से उपयोग में ला सके!! इसका सबसे प्रभावी और सरल तरीका हैं "राजयोग " में प्रवीणता प्राप्त करना।

जी हाँ राजयोग ही एक ऐसी पद्धति हैं, जो हमें अपने भीतर छुपे हुए अनादी गुणों से अवगत कराती हैं , जिसके फलस्वरूप हम अपने जीवन में उत्पन्न हो रहे तनाव एवं अशांति के कारणों को जानकर बड़ी सहजता से और सरलता से उनका निवारण कर पाते हैं। तो आइये! हम सभी राजयोग का अभ्यास कर स्थायी शांति को अपने जिनेका तरीका बनाएं और समस्त संसार में शांति की लहर फैलाएं।

परम शांति की अनिभूति

आज की इस भाग-दौड़ भरी दुनिया में, मनुष्य को न अपने लिए समय मिलता हैं और न अपने परिवार के लिए। दुर्भाग्यवश आज एक परिवार में रहते हुए भी हमें एक दुसरे का हाल-चाल टेलीफोन या इमेल से जानना पड रहा हैं। इसी कारण आज हमारे जीवन में सुख और चैन की जगह *"तनाव"* और *"अस्वस्थता"* ने ले ली हैं। अपनी क्षमता से अधिक ज्यादा कार्य करने में व्यस्त होने कारण हमसे ज्यादा भूलें हो रही हैं, और उन भूलो को सुधारने के पीछे हमारा अमुल्य समय व्यर्थ जाता हैं जिसके फलस्वरूप हम *"डिप्रेशन"* के गहरे कुए में डूब से जाते हैं। कुछ लोग तो अपने अधूरे कार्यो की सूचि देख इतने उब जाते हैं, की वह आखिर कार्य करना ही बंद कर देते हैं और बिलकुल निष्क्रिय होकर बैठ जाते हैं।

दूसरी ओर कई ऐसे प्रकार के भी लोग होते हैं, जो सारा दिन इतना अथक मेहनत करते हैं, परन्तु उनके चेहरे पर कोई शिकन दिखाई नहीं पड़ती और न ही उनकी सूरत से कोई थकान की अनुभूति होती हैं। भला ऐसी क्या ख़ास बात हैं उनमे ? इसका राज़ यह हैं की वेह स्वयं के एवं समय के मुल्य को अच्छी तरह से जानते हैं और उसकी कदर भी करते हैं, और जो स्वयं और समय का मुल्य जानता हैं, वह जीवन में कभी भी दुखी या उदास नहीं हो सकता। मनुष्य जन्म में हम बाल्यवस्था से युवावस्था और फिर वानप्रस्थ अवस्था रूपी नित्य परिवर्तन का अनुभव करते रहते हैं, मगर *"मैं"* जो एक चैतन्य ज्योतिस्वरूप आत्मा हूँ, वह भिन्न भिन्न शरीर के माध्यम द्वारा अपनी भावनाएं व्यक्त करते हुए भी अपनी मूल पहचान बरक़रार रखता हूँ। अतः हमें जीवन के मूल रहस्य को जान लेना चाहिए की हम अनेक जन्मो में अनेक शरीर धारण करेंगे, परन्तु रहेंगे तो हम इस विशाल सृष्टि रूपी रंग मंच पर हमें मिला हुआ पार्ट बजाने वाली *'चैतन्य आत्मा'* ही! यदि हम इस विधि के अभ्यासी बन जायें, तो हम स्वयं के साथ निष्पक्ष होकर अपनी जिस्मानी भूमिका को निभा पाएंगे और साथ साथ दूसरों की भूमिका का निरिक्षण कर अपना आत्मनिरीक्षण कर अपने अन्दर सकारात्मक परिवर्तन ला पाएंगे, जिससे हमारी भूमिका अधिक सुन्दर, यथार्थ और स्पष्ट हो जाएगी। परन्तु इस सम्पूर्ण विधि में निपुणता हासिल करने के लिए *"एकांत"* एवं *"ध्यान धारणा "* करना अति आवश्यक हैं। प्रेम और शांति मानव जीवन के दो आधार स्तम्भ हैं और हमारे निजी गुण हैं, अतः हर मनुष्य को एक दुसरे के साथ प्रेम वा शांति का आचरण रखना नितांत आवश्यक हैं। हमारे ईर्दगिर्द कितनी भी अशांति क्यों न हो, फिर भी हमें अपने भीतर हमारे यह दो निजी वास्तविक गुणों को सदैव जाग्रत रखना चाहिए। शुद्ध प्रेम एवं शांति की शक्ति द्वारा जागृत उर्जा से हम अतीत एवं वर्तमान के गहरे घावों को ठीक कर स्वयं में और समाज में बोहोत बड़ा परिवर्तन ला सकते हैं और अपना एवं औरो का जीवन सुखमय बना सकते हैं।

भावनात्मक स्थिरता

कल किसने देखा! यह विषय पर अनगिनत गीत लिखे गए हैं, परन्तु फिर भी प्रश्न वहीँ के वहीँ ही है की कल किसने देखा? इसीलिए ही आज चारों ओर यह वायुमंडल सभी के मन में फैला हुआ हैं की "पता नहीं क्या होगा? अब और क्या देखना बाकि हैं ?" ऐसे में हमारी प्राथमिकता अपनी आन्तरिक स्थिरता एवं मजबूती की तरफ होनी चाहिए। यदि हमारा आत्मबल मजबूत होगा और हमारा संयोग परमात्मा से अटूट होगा, तो हम कैसी भी आपातकालीन परिस्थिति का बड़ी सूझ-बुझ के साथ मुकाबला कर सकेंगे।

आध्यात्मिकता हमें स्व का दर्शन कराती हैं और हमारी भावनाओं को सकारात्मक एवं सशक्त बनाती हैं, जिसके फलस्वरूप हम परमात्मदर्शन से लाभान्वित होते हैं। जब हम अपने आप से रूबरू होते हैं, तब हम दूसरों से बड़ी सहजता से रूबरू हो सकते हैं। क्योंकि कहा जाता हैं की *"जो दर्पण में स्वयं से आँख मिला सकता हैं, वह सारे विश्व से आँख मिला सकता हैं"*। अतः हमें सर्व प्रथम खुद को पहचानना हैं, तद्पश्चात हम दुसरों को जान सकेंगे और उन्हें सहयोग दे उनके अन्दर भी अध्यात्मिक चेतना जागृत कर सकेंगे।

कई बार हम अनुभव करते हैं की जीवन में आई हुई असफलता, सफलता का रास्ता हमारे लिए खोलकर जाती हैं। मिसाल के तौर पे, जब हम बीमार पड़ते हैं, तब हमें एकांत की अनुभूति का सुवर्ण अवसर प्राप्त होता हैं, जो रोज़ मर्रा की भागदौड़ भरी ज़िन्दगी में शायद ही हमें मिल पाता हैं। इसी प्रकार जब कोई अपना स्नेही इस दुनिया से विदाई लेकर हमसे दूर चला जाता हैं, तब उस सम्बन्ध की कमी को पूरी करने के लिए हमारा झुकाव ईश्वरभक्ति एवं आध्यात्मिकता की ओर ज्यादा बढ़ता जाता हैं, जिसके फलस्वरूप हमें जीवन जीने की एक नयी राह मिल जाती हैं। देखा जायें तो अपने अन्तरंग-निकटतम स्नेही का वियोग सहन करना अति कष्टदायी होता हैं, परन्तु हमारी नवजागृत अध्यात्मिक चेतना द्वारा हम उस कष्ट को हल्का कर विदाई ली हुई आत्मा को भी हमारे शांति एवं सद्भावना के प्रकम्पनो से सहयोग एवं सुख का अनुभव करा सकते हैं। यदि हमारी मानसिक स्थिति उथल-पुथल में आ जाएगी, तो उसका असर हमारी स्नेही आत्मा के मृत्युउपरान्त सफ़र में बाधा डालने का काम करेगा। अतः ऐसे हालातों में सदैव अपने अन्दर यह स्मृति जागृत करें की यदि हम दुखी होंगे, तो उससे दुसरों का भी दुःख बढेगा, इसीलिए हमें अपनी "भावनात्मक स्थिरता " के द्वारा दुसरो के दुःख को कम करके उनके अन्दर भी शक्तिशाली चेतना जागृत करनी हैं। यह करने से हम दुसरों के साथ साथ अपने आपको भी सशक्त महसूस करेंगे और सहजता से अपने वियोग के दुःख से उभर आएंगे।

विश्व परिवर्तन का आधार
'स्व परिवर्तन'

हर मनुष्य आत्मा से कभी न कभी कहाँ न कहाँ जीवन में कोई न कोई मोड पर गलती अवश्य होती हैं, परन्तु उसे स्वीकार कोई नहीं करता। अपनी गलती को विशाल हृदय से स्वीकार करना यह वास्तव में एक श्रेष्ठ गुण हैं, जो बोहोत कम लोगो मे पाया जाता हैं। इस एक गुण को धारण करने से हमारा जीवन शांत व सुखी बन जाता हैं, साथ साथ हमारे अंदर निरअभिमानी वृत्ति, सहन शाक्ति, सामना करने की शक्ति आदि का विकास भी होता हैं। आमूमन लोगो की ऐसी मान्यता रहती है कि गलती को स्वीकार करने से हमारी प्रतिष्ठा या सम्मान को ठेस पोहोच सकती हैं। लेकिन यह सरासर गलत मान्यता है। वास्तव मे गलती को स्वीकार करना यह एक श्रेष्ठ कर्म और साहस का प्रतिक है। कहा जाता हैं कि सत्य की विजय निश्चित हैं। अत: हमारे चरित्र का सबसे बड़ा गुण सत्यता हैं। इसलिए जब हम अपनी गलती को साहस एवं सत्यता के साथ स्वीकार करते हैं, तब हमारे अंदर असीम मानसिक शाक्ति का निर्माण होता हैं।

कभी-कभी हमारे मन में कुछ लोगों के प्रति ईष्या-द्वेश भावना आ जाती हैं, और हमें उनके स्वभाव-संस्कार से नफरत सी होने लगती हैं, ऐसे समय पर हमें यह महसूस करना चाहिए कि सर्वशक्तिमान ईश्वर को प्रेम का सागर, क्षमा का सागर क्यो कहा जाता है? क्योंकि ईश्वर ने हम सभी आत्माओ को अपनी कमी-कमजोरी, अच्छाई-बुराई के साथ स्वीकार किया हैं। उन्हें कभी भी कोई आत्मा के प्रति द्वेश-नफरत या भेदभाव नही होता है, बल्कि सभी के प्रति शुध्द प्रेम होता हैं। सर्वशक्तिमान परमात्मा सदैव अपने प्यारे बच्चों को अपने ज्ञान, प्रेम व शक्तियों के खजानों द्वारा सर्वगुणसंपन्न, सर्वशक्तिमान बनाना चाहते हैं। वे अपनी ज्ञान, प्रेम, शक्ति की किरणें हमारे उपर सदैव प्रवाहित करते रहते है। इसीप्रकार हमें भी परमात्मा समान सभी के गुण-अवगुणों को बड़े दिल से अपने अंदर समा लेना चाहिए। गलती को स्वीकार करने से भले हम सही हैं या गलत हैं यह कभी सिद्ध नहीं होता हैं परंतु हमारे अंदर रिश्ते-संबध निभाने की क्षमता दूसरों से कई गुना अधिक हैं यह अवश्य ही सिध्द होता हैं। इससे ही आपस में अपनापन, प्यार की भावना का उदय होता हैं। अत: विश्व-बंधुत्व की भावना साकार करने के लिए गलती को स्वीकार करने के गुण का बड़ा योगदान होता है।

पश्चाताप की पीड़ा से अधिक श्रेष्ठ हैं-
स्व-परिवर्तन की भावना

पश्चाताप या अफसोस करना यह हमारे जीवन की ऐसी दुःखदायी भावनाएँ है, जिसका असर बाहर से तो दिखाई नही पड़ता है लेकिन अंदर बड़ी अजीब सी घुटन महसूस कराता हैं जिससे हमारा मन अंदर ही अंदर खाता रहता हैं। इसका मूल कारण है भूतकाल की कुछ घटनाओं को परिवर्तित करनेकी हमारी तीव्र इच्छा। जो अवसर हमनें खो दिए हैं, उन्हें फिर से हम प्राप्त करना चाहते हैं। कई बार हम सोचते हैं कि ऐसा न होकर ऐसा होता तो.....जैसे कि मैं अपने बच्चे पर नहीं चिल्लाता तो ...., मैं अपने दोस्त से बुरी तरह से झगड़ा नहीं करता तो आज मेरा दोस्त मेरे साथ होता....ऐसी अनेकानेक बातें सोच-सोचकर हम अफसोस या पश्चाताप करते रहते हैं। अफसोस करना .. समय, संकल्प और शक्ति को व्यर्थ बर्बाद करना हैं। एक तो गलती करते वक्त अपना समय, अपनी शक्ति को व्यर्थ बर्बाद किया, फिर उसका चिंतन या पश्चाताप करने में अपना अमूल्य समय और अपनी शक्ति को व्यर्थ बर्बाद किया।

पश्चाताप की भावना में बुद्धि का सोचना बिलकुल बंद हो जाता हैं। *! याद रखें !,* निराश होकर हम कभी भी भूतकाल की बीती हुई बातों को परिवर्तन नहीं कर सकते। इसलिए जीवन में पीछे मुड़ कर देखने के बजाए आने वाले समय की ओर देखें । बेहतर यही होगा की पश्चाताप या अफसोस पर विजय प्राप्त करने के लिए अतीत को एक अनुभव के रुप में स्वीकार करें । उस अनुभव से हमें क्या सीख मिली इसका चिंतन करें और बीती हुई बात को पूर्णविराम देकर आगे के लिए सावधानी बरतें । शांति में बैठकर भविष्य में ऐसी गलती दुबारा न हो, इसके लिए हमें क्या करना चाहिए इसे सोचें। पश्चाताप की भावना को मन से निकाल दें और जीवन में आगे बढ़ते रहें। कुछ पल के लिए आरामदायी स्थिति में बैठे और अपनें मन से पश्चाताप की पीड़ा को निकाल दे। लेकिन! इतना बेपरवाह नही बनें की वह गलती दुबारा हमसे हो जायें। गिरे हुए दुध पर रोने से कोई फायदा नहीं। अगर आप गिरे हुए दूध की किंमत को जान नही सके, तो आगे इससे अधिक दूध गिरा सकने की संभावनाएँ हो सकतीं हैं। इसलिए प्रति दिन सोने से पहले अंतर्मन के दर्पण में स्वयं को देखे और जीवन में कुछ अच्छा लक्ष्य बनाकर यथार्थ रीति से अपने जीवन का आनंद ले।

अपने भाग्य के निर्माता हम खुद

!! मंजिलें उन्ही को मिलती हैं , जिनके सपनो में जान होती हैं

पंख से कुछ नहीं होता हैं यारों , हौंसलो से उड़ान होती हैं !!

कहते हैं कि “अपने भाग्य के निर्माता हम खुद है,न की कोई और ” इस विधान का रहस्य समझने के लिए हमको गहन विचार सागर मंथन करने की बहुत आवश्यकता है। आज के इस वैज्ञानिक युग में भी शकुन-अपशकुन , अंधश्रद्धा ,परंपरा का प्रभाव लोगोंपर चारों ओर दिखाई देता हैं। जैसे बिल्ली का रास्ता काटना अर्थात अपशकुन और हाथ में शुभ चिन्ह पहनना अर्थात शुभ.... इन सब बातों को सोचने में हम अपना बहुमूल्य समय कितना व्यर्थ गंवाते हैं, शायद हम मे से किसीको भी इसका रिन्चक भी अंदाज़ा नहीं होगा। अब प्रश्न यह उठता हैं कि क्या शकुन -अपशकुन का हमारे वास्तविक जीवन पर कोई प्रभाव पड़ता हैं ? इसका सीधा उत्तर हैं नहीं, हमारे जीवन पर इन बातों का कोई प्रभाव नही पड़ता, क्योंकि वास्तव मे यह बाते मानसिक दुर्बलता का संकेत कराती हैं। अतः ऐसी बातों से त्रस्त न होकर सकारात्मक दृष्टि से उन बातों को देखना चाहिए और उनका समाधान करना चाहिए ।

शुभ-अशुभ विचारों के जाल से मुक्त होकर हमें हर बात में छुपी हुई अच्छाई को देखना चाहिए। याद रखिये ! कोई भी परिस्थिति कितनी भी बुरी क्यों न हो, उसमें एक बात तो जरुर अच्छी होती हैं, उसे ढूँढने की कोशीश करनी चाहिए जिससे भविष्य में हमारी उन्नति हो। किसी भी परिस्थिति को समस्या के रुप में न लेकर समाधानी वृत्ति रखकर जीवनपथ पर सदैव आगे बढ़ते रहना चाहिए और वर्तमान में रहकर कर्म करना चाहिए। भाग्यशाली व्यक्ति वही होता है जो हर समस्या को सकारात्मक दृष्टि से देखें, और उसे प्रगति करने का सुअवसर माने। अपनी नकारात्मक वृत्ती से हमारा जीवन निराशाजनक बन जाता हैं अत: अपने भाग्य की तुलना किसी अन्य व्यक्ति के साथ कभी भी न करे। संसार मे हर व्यक्ति विशेष होता हैं और हर व्यक्ति की विशेषता अलग अलग होती है, इसलिए अपनी विशेषता को पहचानकर उसे कार्य में लगाओ तो सफलता आपके गले का हार बन जाएगी और आपका भाग्योदय निश्चित रुप से फलीभूत होगा।

ख़ुशी जैसी खुराक नहीं

विश्वभर के मनुष्य अपने जीवन में तीन चीजों की चाहना जरुर रखते हैं। वह तीन विशेष कामनाएं हैं 'हेल्थ' 'वेल्थ' और 'हेप्पीनेस' अर्थात स्वास्थ्य,संपत्ति एवं खुशी । कहते है, "खुशी जैसी खुराक नही" अर्थात जो खुश रहना जानता हैं, उसके जीवन में सदा प्रगति होती रहती हैं। खुश रहना तो सभी चाहते हैं, परतुं प्राप्त हुई अनमोल खुशी को बढाये कैसे? यह कला बहुत कम लोगो में पायी जाती हैं। वर्तमान दुनिया के हालात देखते हुए क्या हर पल खुश रहना संभव हैं ? क्यों नहीं ? अवश्य हैं। कहा जाता है कि अगर मन खुश तो जहाँ खुश। अतः जिस व्यक्ति के पास मन की शांति है उसके पास सच्ची खुशी है।

विद्‌वान और गुणीजनो के अनुसार दुःख कोई शाश्वत चीज़ नहीं हैं अर्थात सुख की कमी को ही "दुःख" कहा गया हैं। अब प्रश्न यह उठता हैं की हम दुखी क्यों और कैसे होते हैं ? सरल भाषा मे यदि कहे तो हम दुखी तब होते हैं जब हम अपने आत्म-सम्मान की रेखा से निचे गिर जाते हैं। जितना जितना हम निचे गिरते हैं, उतना हमारे जीवन मे निराशा और उदासी छाती जाती। ऐसे मे फिर हमारी यह पक्की मान्यता बन जाती हैं की शायद हमारे जीवन मे कभी ख़ुशी का सूरज उदय होगा ही नहीं। !!मगर!! हमारा लक्ष्य सर्वप्रथम अपने मन को नियंत्रित कर उसे स्वस्थ करने पर होना चाहिए, न की स्थायी ख़ुशी हासिल करने के ऊपर, क्योंकि जब तक हमारा मन स्थिर नहीं होगा, तब तक हम निराशा एवं उदासी को अपने जीवन से भगा नहीं पाएंगे।

एक बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो जीवन में बडी छलांग लगाने के बजाए छोटी-छोटी सफलता के कदम भरते हुए आगे बढता रहे। ऐसा करने से वह अपने मनचाहे पडाव पर बडी आसानी से बिना कोई संघर्ष के पहुंच जाता हैं। संसार की हर एक घटना में कल्याण समाया हुआ हैं, ऐसी भावना रखने से हम श्रेष्ठ स्वस्थिति में स्थित हो सकते है और हर परिस्थिति को अपने वश में कर आस-पास के वातावरण में सकारात्मक उर्जा की तरंगे प्रवाहित कर सकते है। अपने आस-पास होनेवाली घटनाओं से भी हम बहुत कुछ सिख सकते हैं। अगर कोई गलती भी करता है तो उससे भी हमे सीख मिल सकती है। जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण रखने से हम अविश्वसनीय परिणाम पा सकते है। इसीलिए सकारात्मक दृष्टिकोण को विकसित करके हर श्वांस में खुश रहने का प्रयास करे और अपना जीवन सफल बनाएँ।

सकारात्मक बनो

हम मनुष्यों को भगवान की सबसे अदभुत रचना माना जाता हैं। कहते हैं की मनुष्य की रचना करने के पश्चात भगवान ने नयी रचना रचने वाला सांचा ही तोड़ दिया। उस खयाल से हम सभी कितने अमुल्य हैं, परन्तु क्या हमें इसका इल्म भी हैं? शायद नहीं! क्योंकि वर्तमान दुनिया में केवल दुःख, अशांति और भ्रष्टाचार ही चारों ओर दिख रहा हैं। ऐसे में जब हम व्यक्तिगत,व्यवसायी,वैदयकीय एवं शैक्षणिक समस्याओं से झुझ रहे हैं, तब ज्ञानी-गुणी आत्माओं द्वारा हमें एक ही सलाह प्राप्त होती हैं की " सकारात्मक बनो" जिसे अंग्रेजी में कहते हैं "बी पॉजिटिव"। समस्त विश्व में "पॉजिटिव" कैसे बनें उसके ऊपर अनगिनत संभाषण, प्रवचन, एवं संशोधन हुए हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे। पर मन में सहज ही एक प्रश्न उठता हैं की क्या "पॉजिटिव" बनना इतना आसान हैं? हर कोई क्या चुटकी में पॉजिटिव बन सकता हैं? अब यह तो वही जाने जो अनुभव करें, क्योंकि शक्कर की मिठास कितनी वह तो खाने वाला ही जाने।

मनोचिकित्सकों के अनुसार यह सिद्ध किया गया हैं की "नकारात्मकता" हमारे अन्दर व्यर्थ संकल्प पैदा करती हैं और हमारे संकल्पों की गति एवं वृद्धि को बढाती हैं , जिसके फलस्वरूप हमारे संकल्पों की गुणवत्ता कम हो जाती हैं और उसीके साथ साथ हमारा जीवन भी बेज़ार हो जाता हैं। इसके बिलकुल विपरीत "आत्म अनुभूति" एवं "सकारात्मक विचारधारा" हमें यह सनातन सत्य से अवगत कराती हैं की जैसे प्रेम,शांति,आनंद ,सुख हमारे जीवन में सदा स्थायी नहीं, इसी प्रकार से अहंकार,क्रोध,इर्ष्या एवं नफरत जैसे नकारात्मक गुण भी स्थाई नहीं। यदि इस विश्व में अनंत कुछ हैं तो वह हैं "ज्योतिर्बिंदु आत्मा" जो अजर और अमर हैं। अतः हम सभी के लिए "अंतर यात्रा" करना अनिवार्य हैं, जिसके बिना हम जीवन रूपी "बाहय यात्रा" का सुख नहीं ले पाएंगे। आत्म अनुभूति हमें सहज ही भूतकाल में की हुई गलतियों को भुलाकर उसे अनुभव के रूप में संजोकर आगे बढ़ने में मदद करती हैं। जब हम अपनी गलतियों से सीखना शुरू कर लेते हैं, तब सही मायनो में हमें जीवन का सार समझ में आ जाता हैं की "जो हुआ अच्छा हुआ,जो हो रहा हैं अच्छा हो रहा हैं और आगे जो होगा वह अच्छा ही होंगा"। अतः अपनी की हुई गलतियों से सिखने की इच्छाशक्ति जो रखते हैं,वह निष्फलता को भी सफलता में परिवर्तित कर लेते हैं। ऐसे जीवन के हर मोड़ पर सीखते सिखाते सफलता को हासिल करते करते हमारे अन्दर "सकारात्मकता" का गुण स्वाभाविक और सहज आ जायेगा और हमारे इस स्वाभाविक गुण से हम औरों को भी प्रेरित कर उन्हें भी नकारात्मकता से सम्पूर्ण मुक्ति दिला सकेंगे। *तो! आज से ,अभी से "बी पॉजिटिव","सी पॉजिटिव"और "टॉक पॉजिटिव"*।

जरा संभाल के

जल्दबाजी एक ऐसी बुरी आदत हैं जो जीती बाज़ी को हार में परिवर्तित कर देती हैं। हम सभी इस बुरी बला के शिकार हो चुके हैं, हो रहे हैं और शायद आगे भी होते रहेंगे। रोज़मरा की ज़िन्दगी में कई बार हमें ऐसा अनुभव होता हैं की यदि हमने या अन्य व्यक्ति ने विशेष परिस्थितियों में उत्तेजित होकर अपना आपा नहीं खोया होता तो? शायद हमें उतनी भावनात्मक हानि नहीं पहोंचती। खैर!!! यह तो मनुष्य का मूल स्वभाव है की वह फिसलने के बाद ही सोचता हैं की मै संभलकर चलता तो? ठीक ऐसे ही जब हम क्रोध,चिंता,तनाव रूपी वातावरण से बहार आते हैं, तब हम आश्चर्यवश यह सोचने लगते हैं की ऐसा क्या हो गया था हमें जो हमने अपने आप के ऊपर नियंत्रण ही खो दिया ? हमने ऐसा बेहूदा निर्णय कैसे ले लिया? हमें धीरे धीरे यह प्रतीत होने लगता हैं की इतनी सामान्य परिस्थिति में स्वाभाविक प्रतिक्रिया के बदले हमने उसके विपरीत अस्वाभाविक प्रतिक्रिया बिना सोचे समझे कैसे दे दी!! ऐसे अनेक अनुभवों के फलस्वरूप हमारे भीतर दोष की भावना निर्माण हो जाती हैं, जिसके लिए फिर हम अनेक प्रकार के औषधीय उपचार खोजते रहते हैं, परन्तु हमारे हाथ केवल निराशा ही लगती हैं।

सामान्यता सभी की आज यही मान्यता बन गयी है की *"परिस्थितियों पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं हो सकता अतः ये सब तो चलता ही रहेगा, होता ही रहेगा, कोई इस मायाजाल से निकल नहीं पायेगा"*। परन्तु यदि अनुभवियो की माने तो परिस्थियों को बड़ी आसानी से काबू में किया जा सकता हैं, यदि हमारी इच्छा शक्ति प्रबल हो तो। अपने ही जीवन के रोज़ाना अनुभव से हम इसका हल निकाल सकते हैं, मिसाल के तौर पर हम सभी जब सड़क पार करते हैं, तब स्वाभाविक ही थोडा ठहर कर दायें और बाएँ देखते हैं की कोई वाहन तो नहीं आ रहा। ठीक इसी तरह जीवन रूपी मार्ग पर चलते हुए हमें ऐसे ही हर परिस्थिति का मूल्यांकन करने के पहले थोडा ठहरना चाहिए फिर सोच समझकर समुचित प्रतिक्रिया देनी चाहिए जिससे न हमारा और न किसी अन्य का किसी भी प्रकार से नुकसान हो। अब !!यह समूची प्रक्रिया में किसीको केवल १ मिनट लगता हैं, तो किसीको फिर एक घंटा और किसीको फिर कई दिन भी लग जाते हैं। ज़रा सोचिये! ऐसी असमंझस वाली परिस्थिति में हम कितने गलत विकल्प और निर्णय कर लेते होंगे? इसलिए एक बात अवश्य गांठ बांधकर समझ ले की जब हम बाह्य परिस्थियों पर नियंत्रण पाने में असमर्थ हो जाते हैं, तब हमें अपनी आंतरिक सिस्टम को सशक्त करके स्थिर और शांत मन से उन बाह्य परिस्थियों का मुकाबला करना चाहिए। यह संभव तभी होंगा जब हमारे भीतर उर्जा का कोई स्त्रोत निर्माण होगा, और वेह स्त्रोत केवल ध्यान धारणा (मेडिटेशन) से ही निर्माण हो सकता हैं। अतः जब तक हम नियमित रूप से ध्यान धारणा के अभ्यास द्वारा अपने मन को स्थिर नहीं रख पाएंगे, तब तक हमारे जीवन में चुनौतीपूर्ण स्थितियों का निर्माण होता ही रहेगा। इसलिए हर परिस्थिति में पहले थोडा ठहरे, सोचें फिर शांत मन से प्रतिसाद दें। यह विधि अपनाने से हमारे जीवन में सदैव खुशी और सामंजस्य बना रहेगा ।

सब्र का फल मीठा

कहते हैं की सब्र का फल मीठा होता हैं और काली रात के बाद सुनेहरा सवेरा होता हैं। निसंदेह इसमें कोई शक नहीं की "धैर्यता का गुण " आज नहीं तो कल हमें सकारात्मक एवं मीठा फल अवश्य प्रदान करता ही हैं। यह तथ्य सिद्ध हैं की "धैर्य और विवेक" यह एक दुसरे के पूरक हैं,क्योंकि बहुधा जो लोग धैर्यशील होते हैं, उनकी बुद्धिमत्ता एवं गंभीरता का स्तर दूसरों की भेंट में कई गुना अधिक ऊँचा होता हैं। धैर्यता का गुण एक ऐसा विशिष्ठ गुण हैं जो चिंता एवं घबराहट भरी स्थिति को क्षण भर में शांत स्थिति में परिवर्तित कर देता हैं।

हममे से अधिकांश लोग इस गुण के जादुई प्रभाव से अज्ञात हैं, तभी तो आज जिसे देखो वह अधैर्यता वश अपने एवं दूसरों के लिए मुसीबते खड़ी करता रहता हैं। धैर्यवान व्यक्ति के इर्द गिर्द रहने वाले लोगों को उसकी शांति की आभा का हरदम एहसास होता रहता हैं, और वह उन शांति के प्रकम्पनो के चुम्बकीय प्रभाव में जैसे खींचे हुए ही रहते हैं। इसमें कोई शक नहीं की प्रति दिन हम सभी कहाँ न कहाँ, कभी न कभी अधैर्य हो ही जाते हैं और उसका खामियाजा भी भुगतते रहते हैं, परन्तु इस अधैर्यता रूपी ज़ंजीर से मुक्त होना आज तक हममे से कोई सिख नहीं पाया। चाहते तो सभी हैं की हम अधैर्यता से मुक्त हो, परन्तु धैर्यता को सहज रीती से धारण करें कैसे? इस प्रश्न का उत्तर किसी के पास नहीं हैं।

धैर्यता को धारण करना, यह एक रचनात्मक प्रक्रिया है जो हर कोई बड़े आसानी से कर सकता हैं। इस प्रक्रिया का सबसे पहला कदम हैं खुले मन से यह स्वीकार करना की "हमारी अधीर्यता के निर्माता स्वयं हम खुद ही हैं, और कोई नहीं "अतः जैसे हमने निरंतर अधीर रहने की आदत को सालो साल पाला और पोषा हैं, ठीक उसी तरह हम धैर्य रखने की आदत को भी अपने भीतर जागृत कर सकते हैं। हमारी अन्य रचनाओं की तरह यह प्रक्रिया की शुरुआत भी हमारे मानस में ही होती हैं,जहाँ पर पहले हम धैर्य को धारण करते हैं और फिर अपने आत्मविश्वास के बल द्वारा उसे सम्पूर्ण रुप मे अपने भीतर उभारते हैं। समस्त विश्व के मनोचिकित्सकों का यह मानना हैं की जब तक हम किसी आदत या संस्कार को अपने मन से स्वीकार या धारण नहीं करते हैं, तब तक वह उपरी स्तर तक ही रहते हैं और हमारे अवचेतन मन तक पोहोंच नहीं पाते। अतः जब हम समस्त को बिना कोई प्रतिरोध के स्वीकार करना सिख जाते हैं, तब जीवनको हम उसकी समग्रता के साथ अनुभव कर सकेंगे।

हमारी शांति और हमारी स्वीकृति दो प्राथमिक रंगों के सामान हैं जिनके मिश्रण से "संतुष्टता" का जन्म होता हैं। याद रखें !! जब तक हम अपने आप से एवं समस्त से संतुस्ट नहीं रहेंगे, तब तक हम धैर्य को धारण नहीं कर पाएंगे। इसके लिए अनिवार्य हैं सदैव वर्तमान में रहना, ,तांकि भविष्य से बचने और भूतकाल में छिपने के हमारे बेबुनियादी प्रयासों का अंत हो और हमारे जीवन में नयी सुबह हो। तो आइये !! आज से अभी से हम सभी यह प्रण ले की "हम सदा संतुष्ट रहेंगे और धैर्यता को धारण करके ही रहेंगे "।

यथार्थ जीवन परिवर्तन

वर्तमान चारो ओर 'व्यक्तित्व विकास' अर्थात पर्सनालिटी डेवलपमेंट एवं "जीवनशैली परिवर्तन" की बोलबाला हैं। आज जिसे देखो वह अपने बच्चो को विभिन्न क्लासेज में व्यक्तित्व विकास के हेतु से दाखिल करवा रहा हैं। इसके पहले की हम अपने मूल व्यक्तित्व के बारें में चर्चा करें, हमारे लिए यह जानना अनिवार्य हो जाता की आखिर व्यक्तित्व नामक इस शब्द को हम कैसे परिभाषित करेंगे ? क्या यह कोई बाह्य चीज़ हैं या कुछ आंतरिक है?

आज हर कोई अपने जीवन में थोड़े थोड़े समय पर बोरियत महसूस करने लगता हैं, विशेषतःयुवा वर्ग, और इस बोरियत से छूटने के लिए हम विविधता की खोज में इतने आगे निकल जाते हैं की अपने असली एवं मूल व्यक्तित्व को ही भूल जाते हैं। मिसाल के तौर पे ,यदि मैं एक बहुत तनावपूर्ण जीवन जी रहा हूँ, तो मैं इसे कैसे बदल सकता हूँ ? शायद अपनी नौकरी बदल कर,या फिर नया घर लेकर ,या फिर कोई नया शौक अपनाकर, परन्तु ! यह सब तो जैसे कोई पेड़ से पत्तियों की छंटाई करने के समान हैं , इन सभी परिवर्तनों से क्या मेरी मूलभूत समस्या का समाधान होंगा ? नहीं !अतः यदि हम सचमुच ही हमारे जीवन को बदलना चाहते हैं, तो हमें अपने भीतर जाना होंगा। इसके लिए सर्वप्रथम हमें अपने जीवन में संतुलन बनाना होंगा,जी हाँ ! सही पढ़ा आपने। हम सभीको यह अनुभव हैं की रोज़ाना जीवन के हर मोड़ पर कभी हमारा मन हमें एक बात कहता है तो हमारी बुद्धि कोई और बात ,हमारा दिल कुछ और कहता हैं तो हमारा शरीर इन सभी से भिन्न कोई और ही बात कहता हैं,अब ऐसे में हम कैसे इन सभी कारकों के बीच सामंजस्य बना सकते हैं? इसके लिए फिर हमें उसी बुनियादी प्रश्न की और मुड़ना होंगा की "मैं कौन हूँ ?" हम में से ज्यादातर लोग अपने आप को एक बहुत ही भौतिक पहचान दे देते हैं पर क्या हम कभी हमारी पराभौतिक पहचान के बारे में सोचते हैं ? यह समझना की मैं प्रकाश और ऊर्जा से सुसज्जित एक जिव हूँ और मन ,बुद्धि, संस्कार नामक तिन संकायों का मै धणी हूँ , यह जानकारी हम में से कुछ जुज लोगों को ही होंगी।

हमारी वर्तमान स्थिति आज उस रानी की तरह है , जिसने अपना गले का बहुमूल्य हीरो का हार खो दिया था और बड़ी चिंतित होकर वह उसे हर जगह खोज रही थी.उतने में किसीने उसीके गले में पड़े हार को देखकर कहा की जो आप ढूंढ़ रही हो वह आप ही के गले में पड़ा हैं। ठीक उसी प्रकार से हमने भी आन्तरिक रूप से अपने मन की शांति, ख़ुशी और साहस को खो दिया है,परन्तु इन सभी चीजों को अपने भीतर ढूंढने के बजाय हम उन्हें बाहर ढूंढ़ रहे हैं। अतः फिर से उन्हें पुनः प्राप्त करने के लिए हमें अंतर्मुखी होकर हर प्रकार के बाह्य कारकों से अपनी बुद्धि को हटाकर अपने अवचेतन मन से संपर्क बनाना होगा। ऐसा करनेपर हम अपने अधिचैतन्य मन से संपर्क बनाने में सफल होंगे ,जिसके फलस्वरूप हमारे जीवन में फिरसे शांति और खुशी की बहुतायत उपलब्धि हमें प्राप्त होंगी।

अपने डॉक्टर खुद बनें

दुनिया में लोगों को आज खुदको अपनी बीमारी के द्वारा परिभाषित करने का बड़ा प्रचलित फेशन चल पड़ा हैं, जैसे कोई बड़े गर्व से कहता हैं की मुझे अस्थमा हैं, तो कोई ख़ुशी ख़ुशी से सुनाता हैं की मुझे तो रक्तचाप (ब्लड प्रेशर)हैं, कहाँ फिर बड़े लोगों में आपस में यह बाते चलती हैं की 'अरे आपको मधुमेह नहीं है क्या?' सुनकर बड़ा विचित्र सा लगता हैं! परन्तु यह सत्य हैं की बड़े बड़े डॉक्टर्स के पास अपॉइंटमेंट लेने के लिए भी लोगों में अजीब प्रतिस्पर्धा लगती हैं। *'मेरा डॉक्टर उसके डॉक्टर से ज्यादा लोकप्रिय और प्रसिद्ध हो'* ऐसी तमन्ना के साथ लोग लाखों रूपये बेवजह खर्च करते रहते हैं। इस सारे चक्र के दौरान हम अपनी बीमारी के मूल कारण को जानने के बजाय उसके लक्षणों का इलाज करने में ही लगे रहते हैं। परन्तु हम इस महत्वपूर्ण तथ्य से अनभिग्न रहते हैं की स्वास्थ्य की पूर्णता पर लौटने के लिए हमें अपनी बीमारी के मूल कारण की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए न की उसके लक्षण की ओर। मूल कारण? वह कौनसा? अपने मूल अस्तित्व की अज्ञानता। जी हाँ! जब हम अपनी मूल पहचान से अनजान रहकर कर्म करते हैं, तब हमारे भीतर एक काल्पनिक भय पैदा हो जाता हैं जो नकारात्मक भावनाओं को हमारे भीतर प्रवेश होनेका सरल रास्ता बना देता हैं। यही नकारात्मकता फिर आगे चलकर विभिन्न बीमारियों को जन्म देती हैं जो सर्व प्रथम हमारे मन को प्रभावित करती हैं और उसके पश्चात हमारे तन को भी।

जब हम अपने भीतर छुपी अध्यात्मिक उर्जा की चेतना में आ जाते हैं, तब हमें यह पता चलता हैं की वह सबकुछ जिसकी हमें ज़रूरत हैं, वह पहले से ही हमारे भीतर हैं। जी हाँ !!यह सनातन सत्य है की शांति, प्रेम, शक्ति, बुद्धि और खुशी रूपी चिकित्सक शक्तियां हम सभी के भीतर पहले से ही पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं, जिन्हें 'आत्मिक शक्तियों' के नाम से जाना जाता हैं। जिस प्रकार से सूर्य की ऊर्जा हमारे भौतिक शरीर को गर्मी का एहसास कराती हैं, ठीक उसी प्रकार से हमारी आत्मिक शक्तियों की उर्जा से हम आंतरिक रूप से स्वयं का उपचार करने मे सक्षम बन जाते हैं। तभी तो आज दुनिया भर के डॉक्टरों का यह बहुमत है की *'आपकी बीमारी का इलाज आपके ही भीतर हैं न की कहीं बाहर'* ।

नवीनतम वैज्ञानिक अनुसंधान के अनुसार यह देखा गया हैं की जब हमारे मन और हमारे भीतरी गुणों एवं मूल्यों के बिच सामंजस्य नहीं होता हैं, तब हमारे मस्तिष्क में अवचेतन रूप में नकारात्मक विचारों और भावनाओं का उत्पन्न होना शुरू हो जाता हैं जिस कारण से हम व्यथित होकर अति मानसिक और शारीरिक पीड़ा का शिकार बन जाते हैं, परिणामस्वरूप फिर हमें 'बीमार' घोषित कर दिया जाता हैं। इस परिप्रेक्ष्य में हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं की कैसे हमारी मानसिक अवस्था हमें इशारा करते हुए एक संकेत दे रही है की हमने कोई गलत मोड़ ले लिया है। अतः अगर हम इस संकेत को यथार्थ रीती से पहचान लेते हैं, तो फिर बीमारी हमारे लिए एक अमूल्य अवसर बन जाती हैं जिसका फिर हम बड़ी ही सहजता से उपचार करनेमे सफल बन जाते हैं।

स्मरण रहे ! बीमारी से मुक्त एक स्वस्थ जीवन जीने के लिए हमे सदैव स्वयं को प्रकाश और ऊर्जा के प्रतिरूप में देखना चाहिए और अपने अच्छे स्वास्थ्य द्वारा दुनिया के बिच अपनी पहचान बनानी चाहिए न की किसी बीमारी द्वारा! स्वयं का उपचार करनेकी यही श्रेष्ठ विधि हैं। तो आइये!! आजसे अपने डॉक्टर हम खुद बने और अपनी आन्तरिक उर्जा को पुनर्जागृत कर रोगमुक्त और आदर्शयुक्त जीवन जिए।

लेखक का परिचय

राजयोगी ब्रह्माकुमार निकुंज जी, ब्रह्माकुमारिज विश्व अध्यात्मिक संस्थान के युवा-तेजस्वी अध्यात्मिक योगी एवं कुशल राजयोग शिक्षक हैं। ४० वर्षीय निकुंज जी सादगी, विनम्रता और बुद्धिमत्ता की मूरत हैं। आपका जीवन समर्पण, निस्वार्थता और स्व एवं विश्व परिवर्तन के प्रति प्रतिबद्धता का प्रतिक हैं। आप ऐसी खुशनुमा भाग्यशाली आत्मा हैं,जो सदा "प्राचीन राजयोग " सिखने के उत्सुक आत्माओं के लिए सदा हाज़िर-नाज़ीर रहते हैं। दुसरो को तनाव मुक्त जीवन जीता देखकर आपको अपार आनंद की अनुभूति होती हैं।

मुंबई में दिसम्बर १९७५ (1975) में, व्यवसायियों के एक धनाढ्य परिवार में जन्मे निकुंज जी बचपन से ही नास्तिक के रूप में पले बड़े और कभी भी ईश्वर के अस्तित्व में उन्होंने विश्वास नहीं किया। मगर ,१४ वर्ष की आयु में "अध्यात्मिक विभूति " राजयोगिनी ब्रह्माकुमारी दीदी नलिनी जी से हुई कुछ घडियो की संयोगिक मुलाकात ने उनके जीवन में अनपेक्षित एवं आश्चर्यजनक परिवर्तन लाया। श्रद्धेय दीदी जी के क्रान्तिकारी विचारों एवं उपदेशों से प्रेरित होकर उन्होंने अपने माता-पिता की अनुमति लेकर अध्यात्मिक पथ पर चलने का निर्णय ले लिया और अपनी अल्पायु में ही संसार के हर सुख एवं वैभवों का त्याग कर कठोर त्याग एवं तपस्या के मार्ग पर चल ज्ञान के आध्यात्मिक मोतियों को अपने अन्दर धारण कर समस्त विश्व को शांति के प्रकाश से उजागर करनेका लक्ष्य लिया। अध्यात्मिक दीक्षा उपरांत उन्हें अपने परिवार एवं समाज से गंभीर आलोचना और विरोध का सामना करना पड़ा, परन्तु आप सदैव अपनी अनंत साधना में दृढ़ बने रहे और ईश्वर के प्रति उत्कट प्रेम और विश्वास के साथ सफलता के ऊँचे शिखर पार करते गए।

२५ वर्षो के त्याग, तप एवं ईश्वरीय सेवाओं के फलस्वरूप आप अमुल्य ज्ञान एवं गुणों के खजानों से सदैव रहते हैं और दुसरो को भी ऐसे ही भरपूर करते रहते हैं । अध्यात्मिक क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हासिल करने के साथ साथ आपने अनेको के जीवन को एक सच्चे मार्गदर्शक के रूप में निखारा हैं।

आपकी लेखन कला समस्त विश्व में अध्यात्मिक ज्ञान के प्रसार में एक मूल्यवान संपत्ति साबित हुई है। 07 भाषाओं के भाषाविद् होने के नाते आप पिछले कई वर्षो से देश एवं विदेश के अनेक प्रमुख अखबारों के लिए नियमित कॉलम लिखते आ रहे हैं। इनमे से कुछ प्रमुख अख़बार जो हैं वह है:टाइम्स ऑफ़ इंडिया, डी.एन.ए, हिंदुस्तान टाइम्स, दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, अमर उजाला, पंजाब केसरी, लोकमत, देशोन्नति, दिव्य मराठी, गुजरात समाचार, सन्देश, दिव्य भास्कर, हिमालयन टाइम्स(नेपाल), हिन्दूइज़म(लन्दन)....आप अपनी लेखनी द्वारा पूर्वी आध्यात्मिक ज्ञान और पश्चिमी शिक्षा एवं संस्कृति का मिश्रण कर बड़ी सहजता से पूरब और पश्चिम के बीच के अंतर को उच्च स्तरीय संचार कौशल से मिटाने में सफल हो पाए हैं।

आपके जीवन की फिलॉसफी :

''अध्यात्मिकता सिखाई नहीं जा सकती , इसे अनुभव किया जाता है ''